ੴ सतिगुर प्रसादि ॥

गुर गिआन अंजन सचु नेत्री पाइआ ॥
अंतरि चानणु अगिआनु अंधेरु गवाइआ ॥

गुरमति ज्ञान

(धर्म प्रचार कमेटी का मासिक पत्र)

मार्गशीर्ष-पौष, संवत् नानकशाही ५४०

दिसंबर **2008** वर्ष २ अंक ४

संपादक — सिमरजीत सिंह — *एम. ए, एम. एम. सी.*

सहायक संपादक — सुरिंदर सिंह निमाणा — *एम. ए (हिंदी, पंजाबी), बी. एड.*

चंदा

सालाना (देश)	१० रुपये
आजीवन (देश)	१०० रुपये
सालाना (विदेश)	२५० रुपये
प्रति कापी	३ रुपये

चंदा भेजने का पता

सचिव

धर्म प्रचार कमेटी

(शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी)

श्री अमृतसर-१४३००६

फोन : 0183-2553956-57-58-59

एक्सटेंशन नंबर

वितरण विभाग **303**

संपादन विभाग **304**

फैक्स : 0183-2553919

e-mail : gyan_gurmat@yahoo.com

website : www.sgpc.net

यदि आपको 'गुरमति ज्ञान' नहीं मिला या आप चंदे सम्बंधी कोई जानकारी लेना चाहते हैं या अपना पता बदलवाना चाहते हैं या पत्रिका सम्बंधी कोई और जानकारी प्राप्त करना चाहते हैं तो मोः नंः 098148-98001 *पर संपर्क करें।*

विषय सूची

गुरबाणी विचार

पोखि तुखारु पड़ै वणु त्रिणु रसु सोखै ॥
आवत की नाही मनि तनि वसहि मुखे ॥
मनि तनि रवि रहिआ जगजीवनु गुर सबदी रंगु माणी ॥
अंडज जेरज सेतज उतभुज घटि घटि जोति समाणी ॥
दरसनु देहु दइआपति दाते गति पावउ मति देहो ॥
नानक रंगि रवै रसि रसीआ हरि सिउ प्रीति सनेहो ॥१४॥ *(पन्ना ११०९)*

पहले पातशाह श्री गुरु नानक देव जी महाराज बारहमाहा तुखारी की इस पावन पउड़ी में पौष मास के प्राकृतिक वातावरण और इसकी कठोरता के विशेष परिप्रेक्ष्य में मनुष्य-मात्र को प्रभु-नाम के साथ प्रीति लगाकर अपने जीवन को रमणीय बनाने का निर्मल गुरमति मार्ग बख्शिश करते हैं।

गुरु जी कथन करते हैं कि पौष मास में जब अत्यंत शीत पड़ती है, जब कोहरा पड़ता है तो वनस्पति के प्रत्येक तिनके में से रस सूख जाता है। ऐसी स्थिति में हे प्रभु! आप आ करके मेरे मन-तन में, मेरे मुख में बस क्यों नहीं जाते, क्योंकि आपके बिना मेरे मन, मेरी आत्मा रूपी वनस्पति पर भी वियोग का कोहरा आ पड़ा है, जिसने रस को सुखा दिया है!

गुरु जी फरमान करते हैं कि जिस जीव अथवा मनुष्य-मात्र के मन-अंतर में गुरु का शबद मिल जाने पर समस्त संसार के आधार प्रभु आ बसते हैं वह आनंद का अनुभव करता है। उस मनुष्य-मात्र को अंडे से, जेर से, पसीने से और भूमि में से उत्पन्न होने वाली सारी रचना में उस मालिक की ज्योति समाई हुई दृश्यटव्य हो जाती है अर्थात् वह प्रत्येक प्रकार के वैर-विरोध, ईर्ष्या, जलन आदि द्वैत भावों से ऊपर उठ जाता है। अंत में गुरु जी कथन करते हैं कि हे दयालु दाता! मुझको पौष मास की शीत के इस मौसम में दया करके ऐसी आत्मिक सूझ प्रदान कर दो कि मैं भी ऊंची आत्मिक स्थिति को प्राप्त कर सभी जीवों में आपको देख-महसूस कर सकूं, क्योंकि जिसका प्रभु से प्यार विकसित हो जाता है वही इस संसार में ऊंचे रस अथवा रुहानी आनंद का एहसास कर सकता है।

संपादकीय

चारों साहिबजादों की अद्वितीय शहादतें सिख पंथ की नयी पीढ़ी के लिए प्रेरणास्रोत

श्री गुरु नानक देव जी की निर्मल अगुआई में मध्य काल में अस्तित्व में आए सिख धर्म और इस धर्म को स्वीकारने/अपनाने वाले सिख पंथ की कार्यशैली एवं चरित्र संसार में अपनी उदाहरण स्वयं ही है। यह बात अलग है कि संसार में वांछनीय व्यापक स्तर पर सिख धर्म और सिख पंथ संबंधी आवश्यक जानकारी पहुंचाने में सफलता प्राप्त करने की हमारी मंजिल अभी काफी दूर है, लेकिन अधिक उदास-निराश होने की भी आवश्यकता नहीं। गुरु नानक साहिब द्वारा स्थापित सिख धर्म और सजाये सिख पंथ तथा श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी महाराज द्वारा इस पंथ को सर्वोच्च विकास-चरण में प्रवेश कराकर सजाये खालसा पंथ की महिमा विलक्षण है। अब इस धर्म और पंथ के बारे में संसार में जानने की जिज्ञासा उत्पन्न हो चुकी है। इस प्रसंग में विश्व स्तर पर सिख धर्म के व्यापक प्रसार की आशा की जा सकती है, जिसमें कि संसार का वास्तविक कल्याण भी निहित है।

सिख पंथ के सर्वोच्च विकास-चरण में खालसा पंथ की स्थापना से लेकर दशम पातशाह के जीवन-काल और उसके बाद लगभग डेढ़ सदी का समय, जो खालसा पंथ के उत्थान और सर्वपक्षीय विकास-विगास का समय है, न केवल सिख लेखकों-कवियों के लिए बल्कि विश्व के उचित धर्म-निरपेक्ष और अच्छी धार्मिक दृष्टि के धारक कई देशों और भाषाओं के लेखकों-कवियों का पर्याप्त ध्यान आकर्षित करने वाला है।

दशम पातशाह साहिबे-कमाल श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी महाराज के चारों साहिबजादों—बाबा अजीत सिंघ जी, बाबा जुझार सिंघ जी, बाबा जोरावर सिंघ जी, बाबा फतेह सिंघ जी का अल्पकाल का जीवन-वृत्तांत ऐसा है जिसमें हमें एक साथ वीरता, शौर्य, शूरवीरता, ऊंचे साहस, अडोलता सदैव स्थिर अकीदे और स्वाभिमान तथा उच्चतम निर्मल आकांक्षा आदि अनेकों गुणों की भरपूर विस्मादी झलकियां मिलती हैं और इसके साथ ही यह जीवन-वृत्तांत हमें करुणा-भाव के प्रवाह में भी डालता ही डालता है। तत्कालीन राजनैतिक प्रबंध की क्रूरता अपनी चर्म सीमा पर पहुंच कर गुरु-लालों को अत्यंत कठिन परीक्षा में डाल देती है, परंतु गुरु-लाल उसमें से सफलता के उच्चतम शिखरों को छूते हैं और सिख पंथ/खालसा पंथ के इतिहास का सबसे अधिक गर्व करने योग्य चैप्टर लिखवाते हैं, एक अनंत अमर गाथा का सृजन करते हैं, जो कि गत सदियों से चलती आई है, अब भी चल रही है और रहती दुनिया तक चलती रहेगी।

गुरु जी के दो साहिबजादों—बाबा अजीत सिंघ जी, बाबा जुझार सिंघ जी का लासानी जीवन और उनकी शहादत देश-कौम और सिख पंथ/खालसा पंथ की आन-शान की बढ़ोत्तरी हेतु एक बहुत ही उज्जवल उदाहरण है। धार्मिक भावना से ओत-प्रोत ये दोनों साहिबजादे ऊंचे साहस एवं निडरता का एक नया प्रतिमान सृजित करते हैं। अनंदपुर साहिब की लंबी लड़ाई के पश्चात जब गुरु जी को किला छोड़ना पड़ता है तो दुश्मन द्वारा कसमें-वादे भुलाकर जब अचानक आक्रमण कर दिया जाता है तो साहसी गुरु-लाल मुगल सेनाओं से लोहा लेते हुए सरसा नदी पार करने

में सफल होकर गुरु-पिता के सिंघों के चुनिंदा सैनिक जत्थे के एक अभिन्न अंग के रूप में चमकौर की गढ़ी में प्रवेश करते हैं। सिंघों को मुगल सेनाओं के साथ जूझते देखकर और शहीदियां प्राप्त करते हुए पाकर दोनों साहिबजादे बारी-बारी स्वयं गुरु-पिता के सम्मुख आकर मैदाने-जंग में कूदने की अनुमति मांगते हैं, अनगिणत दुश्मनों को पार बुलाकर शहीदी जाम पीते हैं और गुरु-पिता से शाबाश प्राप्त करते हैं। चमकौर के युद्ध में गुरु-सपुत्रों का अपूर्व साहस के साथ जूझना शेष सिंघों के लिए, दुश्मनों को अपनी अति अल्प संख्या के बावजूद कड़ी टक्कर देने के लिए प्रेरणा का स्रोत बनते हैं। मात्र १७ और १४ वर्ष की आयु में वीर गुरु-सपूत होने का प्रमाण प्रस्तुत करने के साथ-साथ गुरु जी के साजे-निवाजे सिख पंथ का भी स्वयं को अभिन्न अंग दर्शाते हैं, बड़े साहिबजादे गुरु-सपूत होने के साथ-साथ सच्चे गुरसिखों के रूप में भी हमें विस्मादित करते हैं। वे अपने लिए अन्य सिखों से बढ़कर विशेष व्यवहार अथवा कोई लाभ या छूट नहीं चाहते। उनको मैदाने-जंग में जूझकर सीनों पर प्रहार सहते हुए शहीदियां प्राप्त करते देखकर गुरु जी अकाल पुरख का धन्यवाद करते हैं कि सपुत्रों ने कर्त्तव्य निभाया है तथा हे प्रभु! तेरी अमानत तेरे पास पहुंच गई है। चमकौर के युद्ध में अन्य चालीस सिंघ भी शूरवीरता के जौहर दिखाते हुए शहीदी का जाम पीते हैं।

और जो गाथा, जो इतिहास छोटे साहिबजादों ने सृजित किया वह तो पाठकों-श्रेताओं को दांतों तले अंगुली दबाने की स्थिति में डाल देने वाला है। सरसा नदी को पार करते समय गुरु जी और उनके सिंघों के संग-साथ से बिछुड़कर जब उनकी दादी मां माता गुजरी जी और नन्हें गुरु-लाल रात्रि के अंधकार में अकेले रह जाते हैं और गुरु-घर के पूर्व सेवक गंगू के अचानक मिल जाने और अपने घर-ग्राम ले जाने तथा सुरक्षा देने के आग्रह पर गांव खेड़ी (सहेड़ी) पहुंचते हैं और गंगू की नीयत खोटी हो जाने पर जब उनको गिरफ्तार कर लिया जाता है, तो नन्हें गुरु-लाल अपनी अत्यंत अल्प आयु, अपने बाल्य-काल के बावजूद जिस ऊंचे साहस, सिखी धर्म पर कायम रहने की जो दृढ़ता दिखाते हैं, उसको देखकर सभी दंग रह जाते हैं। सूबा-ए-सरहिंद की कचहरी में छोटे साहिबजादे बाबा जोरावर सिंघ और बाबा फतह सिंघ, जिनकी आयु मात्र सात और पांच वर्ष की है, डर, भय, झूठ, लालच आदि दिये जाने पर अपने धर्म के मार्ग से रंचक मात्र भी विचलित नहीं होते बल्कि प्रताड़ित करने वाले हकूमत के शासकों-प्रशासकों, अहलकारों, कारिंदों के मुंह पर सत्य सुनाते हुए उन्हें उनकी जुल्म-अत्याचार तथा अन्याय पर आधारित कुनीति का भांडा फोड़ते हैं और अंत में नीवों में भी अडोल, अडिग रूप में खड़े होकर, बांहें ऊंची करके जयघोष बुलंद करते हैं। जल्लादों द्वारा कोह कोह कर दोनों साहिबजादों को शहीद कर दिया जाता है।

नन्हें गुरु-लालों की शहादत विश्व इतिहास में अपनी मिसाल आप है। यह शहादत हमें एक साथ करुणा-भाव का एहसास और गुरु के सृजित पंथ की आन-शान तथा चढ़दी कला, वीरता, दृढ़ता एवं ऊंचे साहस का भी गौरवशाली अनुभव कराती है। आने वाले समय में सिख पंथ चारों साहिबजादों की लासानी शहादतों से प्रेरणा लेकर हरेक काल-खंड में कुर्बानियों और प्राप्तियों का इतिहास रचता आ रहा है। यह प्रक्रिया इन शहीदियों के बाद आने वाली हरेक सदी में निरंतर चलती आ रही है और अब भी रुकी नहीं है। इस प्रकार चारों साहिबजादों की शहादत सिख पंथ के लिए प्रेरणा का अनंत स्रोत है।

श्री गुरु नानक देव जी का लासानी प्रारंभिक जीवन

-बीबी कुलबीर कौर*

श्री गुरु नानक देव जी का प्रकाश माता तृप्ता जी की पवित्र कोख से श्री मेहता कालू जी के घर ग्राम राय भोय की तलवंडी, जो अब ननकाणा साहिब के नाम से प्रसिद्ध है, में हुआ तो जगत में अज्ञानता से जो पापों की घटा छाई हुई थी, वह सूर्य रूपी गुरु के प्रकट होने से छट गई और ज्ञान का उजाला सारे जगत में फैल गया। भाई गुरदास जी लिखते हैं-

सतिगुरु नानकु प्रगटिआ मिटी धुंधु जगि चानणु होआ।
जिउ करि सूरजु निकलिआ तारे छपि अंधेरु पलोआ।
सिंघु बुके मिरगावली भंनी जाइ न धीरि धरोआ।
जिथे बाबा पैरु धरि पूजा आसणु थापणि सोआ।
सिधासणि सभि जगति दे नानक आदि मते जे कोआ।
घरि घरि अंदरि धरमसाल होवै कीरतनु सदा विसोआ।
बाबे तारे चारि चकि नउ खंडि प्रिथवी सचा ढोआ।
गुरमुखि कलि विचि परगटु होआ ॥२७॥ (वार:१)

वे फरमाते हैं कि जिस तरह सूर्य के उदय होने से तारे छुप जाते हैं और अंधेरा दूर हो जाता है, जैसे शेर की गर्जना से मृगों की कतार तितर-बितर हो जाती है और धैर्यपूर्वक खड़े रहने का साहस नहीं रखती इसी तरह ही गुरु जी की सति नामु की गर्जनों से पापों पर वज्रपात हुआ।

श्री गुरु नानक देव जी के जन्म के उपरांत जब पंडित हरदयाल आपकी जन्मपत्री बनाने लगा तो उसके द्वारा पूछने पर दौलतां दाई ने बताया कि इस बालक के जन्म के समय मैंने दो आश्चर्यजनक बातें देखी हैं। पहली बात यह कि अन्य बालकों की भांति जन्म के समय रोने के स्थान पर यह बालक खिलखिला कर हंसा था और दूसरी बात यह कि इसके जन्म वाली कोठरी में इस तरह प्रकाश हुआ था कि मानों चन्द्रमा का उदय हो गया हो। फिर पंडित ने बालक के सारे शरीर के अंग और चिन्ह देखकर श्री मेहता जी को बताया-

इस सिसु को मानहिगे दोऊ।
हिंदू तुरक सिख होइ कोऊ।
इसके चरन पोत की निआई।
पार परहिं परमारथ पाई ॥१॥
संगत करहिं तरहि भवसागर।
सकल जगत महि होइ उजागर।
बहुर नरन को करहि उधारा।
नाम भगति दे दान उदारा ॥२॥

आप जन्म से ही पारब्रह्म परमेश्वर का रूप थे। आपकी बाल-क्रीड़ाओं से पता चलता है कि आप विशेष शक्तियों के मालिक थे। जिस स्थान पर आप अपने हम-उम्र मित्रों के साथ खेला करते थे, वहां आपकी इस याद में गुरुद्वारा बाल लीला साहिब प्रसिद्ध है। बाल-लीला की एक झांकी प्रस्तुत है :

एक दिन माता तृप्ता जी ने आपको चूरी

*C/o Major Hardeep Singh, Plot No. 32, Sec 17, Koparkhairne, Navi Mumbai-400701

कूट कर दी। आप चूरी वाला कटोरा लेकर बालकों में खेलने चले गये। आप ने चूरी बालकों के साथ बांट कर खा ली और कटोरा दूर फेंक कर बालकों के साथ खेलते रहे। खेलने के पश्चात घर वापस आए तो माता जी ने पूछा कि कटोरा कहां है? आपने हंस कर कहा, "माता जी, कटोरा बाहर बच्चों की खेलें देख रहा है।" माता जी ने जब गुस्से से देखा तो आप ने नज़रें झुका लीं। तब माता जी भोले-भाले, सुंदर चेहरे को देखकर मोहित हो गईं। गोदी में उठा कर प्यार से समझाया कि घर की चीजें बाहर नहीं फेंका करते।

इसी तरह गुरु जी घर की कई वस्तुएं बाहर बालकों को दे आते थे, जिससे श्री मेहता कालू जी और माता तृप्ता जी पंडित हरदयाल को उलाहने देते रहते थे कि तुमने तो कहा था कि यह घर का उत्थान करेगा लेकिन यह तो घर उजाड़ रहा है। पंडित कहते, मेहता जी! एक दिन आप देखेंगे कि मैंने जो कुछ बताया है, वह सब ठीक है।

इस प्रकार बाल-लीला करते हुए गुरु जी छः वर्षों के हुए तो आपको पिता जी ने पढ़ने योग्य समझ कर आचार्य गोपाल के पास मुनीमी के काम के लिए लेखा-जोखा सीखने के वास्ते पढ़ने बैठा दिया। जब आप कुछ समय तक गोपाल जी के पास मुनीमी पढ़ते रहे तो एक दिन उन्होंने कहा कि बाबा नानक जी! पाती लिख कर दिखाएं। तब गुरु जी ने यह पाती (पट्टी) लिख कर गोपाल जी को दिखाई :

ससै सोइ स्रिसटि जिनि साजी सभना साहिबु एकु भइआ ॥
सेवत रहे चितु जिन्ह का लागा आइआ तिन्ह का सफलु भइआ ॥
मन काहे भूले मूड़ मना ॥
जब लेखा देवहि बीरा तउ पड़िआ ॥ (पन्ना ४३२)

श्री ननकाणा साहिब में गुरु जी की इस याद में गुरुद्वारा पट्टी साहिब प्रसिद्ध है।

जब गोपाल जी ने यह पढ़ा तो हैरान होकर कहा कि बेटा, तुम्हारा यह लिखना तो ठीक है लेकिन तुम क्षत्रिय पुत्र हो, तुम्हें चाहिए कि पढ़-लिख कर अपने जीवन में प्रगति करो और सुखपूर्वक रहो। लेखा-जोखा सीख कर धन-दौलत कमा कर अपने परिवार को सुखी रखोगे तो तुम्हारी इज्जत बढ़ेगी तथा रिश्तेदारों में भी मान-सम्मान पाओगे। तब गुरु जी ने कहा कि यह लेखा-जोखा सीखकर मैं धन-दौलत तो कमा लूंगा परन्तु आगे भविष्य कैसे बनेगा? इसीलिए हमें वह लेखा सीखना चाहिए जो हमारा परलोक संवार दे और इस लोक में भी काम आए। आचार्य गोपाल ने पूछा कि ऐसा कौन सा लेखा है जो लोक-परलोक में काम आए? तब गुरु जी ने निम्नलिखित शबद का उच्चारण किया :

जालि मोहु घसि मसु करि मति कागदु करि सारु ॥
भाउ कलम करि चितु लेखारी गुर पुछि लिखु बीचारु ॥
लिखु नामु सालाह लिखु लिखु अंतु न पारावारु ॥१॥
बाबा एहु लेखा लिखि जाणु ॥
जिथै लेखा मंगीऐ तिथै होइ सचा नीसाणु ॥
(पन्ना १६)

अर्थात् दुनिया का मोह जलाकर उसकी सियाही बनाएं और उत्तम बुद्धि को कागज बना कर, उस पर ईश्वर-प्रेम की कलम से अपने मन को लिखने वाला बना कर, गुरु के पवित्र उपदेश को लिखें। नाम की महिमा लिखें और बार-बार लिखते ही जाएं। यह लेखा लिखना सीखें। जहां आपको ज़िंदगी का लेखा देने की आवश्यकता होगी वहीं पर यह सच्चा परवाना

आपके साथ होगा।

आपके ये श्रेष्ठ विचार सुनकर आचार्य गोपाल ने आपको नमस्कार किया और श्री मेहता कालू जी से कहा, "मेहता जी! यह बालक तो कोई महापुरुष जन्मा है। जो कोई इससे ज्यादा विद्वान होगा, वही इसे पढ़ा सकेगा। मुझमें इसको पढ़ाने की शक्ति नहीं।"

अब श्री मेहता कालू जी ने विचार किया कि श्री गुरु नानक देव जी की ज्यादा रुचि धर्म की ओर है इसलिए इनको वेदों-शास्त्रों की विद्या जानने वाले किसी पंडित के पास विद्याध्ययन के लिए भेजना उचित होगा।

इस विचार से श्री मेहता जी ने श्री गुरु नानक देव जी को संस्कृत के प्रसिद्ध पंडित बृज लाल के पास पढ़ने के लिए भेजा। पंडित जी आप को बड़े प्रेम से पढ़ाते रहे और आप भी पढ़ते रहे। बाद में आप ने सोचा कि यह काम भी पूरा हो चुका है। और काम करने की इच्छा से आप कभी घर में ही आंखें बंद करके बैठे रहते तो कभी अपने मित्रों के साथ खेलते समय उनको पास बैठा कर रूहानी ज्ञान की बातें सुनाते रहते। परन्तु श्री मेहता कालू जी की प्रबल इच्छा यही थी कि श्री गुरु नानक देव जी कुछ ऐसा काम सीख लें जिससे वे कुछ कमाई करने के योग्य हो जाएं। अत: दूसरे ही दिन जब श्री मेहता कालू जी ने अपना विचार भाई राय बुलार को बतलाया तो उसने बड़ी सहानुभूति के साथ कहा कि पटवारी जी, श्री गुरु नानक देव जी को फारसी पढ़ने के लिए मौलवी के पास भेज दीजिए। जब वे फारसी पढ़ जाएंगे तो मैं इनको अपना मुंशी बना लूंगा। सरकारी नौकरी के लिए फारसी पढ़नी आवश्यक थी। भाई राय बुलार की सलाह से श्री मेहता कालू जी ने श्री गुरु नानक देव जी को मौलवी के पास फारसी पढ़ने के लिए भेज दिया। भाई राय बुलार के पटवारी का सुपुत्र होने के नाते मौलवी जी बड़े प्रेमपूर्वक पढ़ाते रहे। पर जब कुछ समय इसी तरह बीत गया तो श्री गुरु नानक देव जी ने यहां से भी छुट्टी करने के लिए नया कौतुक रचाया। जब मौलवी ने पूछा कि बाबा नानक जी, आज आप पढ़ते क्यों नहीं तो बाबा नानक जी ने कहा :

मरणा मुला मरणा ॥
भी करतारहु डरणा ॥१॥रहाउ॥
ता तू मुला ता तू काजी जाणहि नामु खुदाई ॥
जे बहुतेरा पड़िआ होवहि को रहै न भरीऐ पाई ॥२॥ *(पन्ना २४)*

अर्थात् हे मुल्ला जी! मृत्यु अवश्य आनी है, इसलिए उस सृजनहार ईश्वर से डरना और उसका नाम-स्मरण करना चाहिए। मैं उसके डर में लगा हुआ हूं। आप भी मौलवी या काजी तभी कहला सकते हैं अगर उस ईश्वर का नाम-स्मरण करके उसे जानो, क्योंकि कोई चाहे कितना ही पढ़ा-लिखा हो, जब उसके श्वासों का अंत हो जाता है तो उसे भी यह संसार त्यागना पड़ता है। इसलिए ईश्वर का स्मरण करना चाहिए।

आपके ये नेक विचार सुनकर मौलवी ने सोचा कि ये कोई ईश्वरीय रूप हैं। इनको और बालकों की भांति जानकर पढ़ाना अज्ञानता है। यह ईश्वरीय बातें करता है, किसी दिन यह अवश्य कोई महापुरुष होगा।

बाबा नानक जी ने छ: साल की उम्र से पंद्रह साल की उम्र तक प्रथम तीन वर्ष आचार्य गोपाल जी से हिन्दी अक्षर और लेखा-जोखा सीखा, फिर तीन वर्ष एक विद्वान पंडित से संस्कृत भाषा एवं साहित्य का ज्ञान प्राप्त किया। इसके पश्चात तीन वर्ष मौलवी कुतुबदीन से उस

समय की राज्य-भाषा फारसी सीखकर अपने आप को विद्या में निपुण कर लिया। इस व्यवहारिक शिक्षा और विद्या के साथ आपने अपने निजी आध्यात्मिक विचार को भी जागृत रखा। ईश्वर के स्मरण के ख्याल को आप कभी भी नहीं बिसारते थे। गोपाल जी, बृज लाल जी और कुतुबदीन जी से जब भी कभी आपकी कोई वार्ता होती तो आप सदा ही ईश्वर का स्मरण, उसकी महिमा और बुराई का त्याग करना ही निश्चय कराते थे। इन तीनों अध्यापकों से गुरु जी ने स्वयं व्यवहारिक विद्या सीखी और उन तीनों को आध्यात्मिक विद्या सिखाई।

श्री गुरु नानक देव जी जनेऊ पहनने के विरुद्ध थे। एक दिन नियत करके श्री मेहता कालू जी ने पंडित हरिदयाल को कहा कि श्री गुरु नानक देव जी को रीति के अनुसार जनेऊ पहना दें। रिश्तेदारों के सामने पंडित जी सारी तैयारी सम्पूर्ण करने के बाद श्री गुरु नानक देव जी के गले में जनेऊ डालने लगे तो आपने कहा, "पंडित जी! इस जनेऊ का क्या लाभ है? यह क्यों पहना जाता है?" पंडित जी ने कहा, "बेटा! यह जनेऊ पहनना क्षत्रिय कुल की रीति है। यह रीति परम्परागत चली आ रही है। इसके बिना क्षत्रिय-ब्राह्मण को शूद्र माना जाता है। यह परलोक में सहायता करता है।" गुरु जी ने कहा, "पंडित जी! यह सूत का धागा तो यहां शरीर के साथ ही जल कर भस्म हो जाता है, परलोक में यह कैसे सहायता कर सकता है?" इसके बाद गुरु जी ने यह श्लोक का उच्चारण किया :

चडकड़ि मुलि अणाइआ बहि चउकै पाइआ ॥
सिखा कंनि चड़ाईआ गुरु ब्राहमणु थिआ ॥
ओहु मुआ ओहु झड़ि पइआ वेतगा गइआ ॥
(पन्ना ४७१)

अर्थात् चार तारों का बना हुआ धागा चार कौड़ियों का मोल लगाकर चौंके में बैठ कर प्राणी के गले में डालकर उसके कान में शिक्षा देने से उसका गुरु ब्राह्मण हो गया! लेकिन जब वह प्राणी मर जाता है तो यह सूत का जनेऊ उसके गले में से गिर पड़ता है और प्राणी जनेऊ के बिना ही दरगाह में जाता है। फिर यह परलोक में कैसे सहायता कर सकता है? गुरु जी ने कहा कि अगर जनेऊ डालना हो तो इस तरह का डालना चाहिए :

दइआ कपाह संतोखु सूतु जतु गंढी सतु वटु ॥
एहु जनेऊ जीअ का हई त पाडे घतु ॥
ना एहु तुटै न मलु लगै ना एहु जलै न जाइ ॥
धंनु सु माणस नानका जो गलि चले पाइ ॥
(पन्ना ४७१)

अर्थात् दया की कपास हो, उससे संतोष का सूत बनाएं, उसको खाल की गांठें देकर, सूत को वट्ट चढ़ाएं। अगर इस प्रकार कोई जनेऊ हो तो वह डालें, क्योंकि यह जनेऊ न तो मैला होगा, न टूटेगा, न जलेगा और न ही खोएगा। पंडित जी! वे पुरुष धन्य हैं जो ऐसा जनेऊ डाल कर परलोक सिधारते हैं। पुन: श्री गुरु नानक देव जी ने कहा :

नाइ मंनिऐ पति ऊपजै सालाही सचु सूतु ॥
दरगह अंदरि पाईऐ तगु न तूटसि पूत ॥
(पन्ना ४७१)

अर्थात् परमेश्वर का स्मरण करने से सम्मान मिलता है और उसका मान-सम्मान ही सच्चे सूत का जनेऊ है। यह पवित्र जनेऊ कभी नहीं टूटता और इससे दरगाह में सम्मान मिलता है।

यह पवित्र उपदेश सुनकर सभी नाते-रिश्तेदार और पंडित हरिदयाल गुरु जी की स्तुति करते हुए अपने-अपने घरों को चल दिए।

श्री गुरु नानक देव जी सांसारिक जीवों को इस तरह भ्रम-जाल में फंसा देखकर गहन चिंतन करते। जहां बैठते, बैठे ही रहते, जहां लेटते, लेटे ही रहते। खाना-पीना भी छोड़ दिया और बोलना भी बंद कर दिया। अपने आप में ही मस्त रहने लगे। आपकी इस तरह की दीवानों वाली दशा देखकर श्री मेहता कालू जी ने सोचा कि आपकी यह दशा बेकार रहने के कारण और कुछ अधिक पढ़ाई की वजह से हुई प्रतीत होती है। इसलिए उन्होंने गुरु जी को किसी काम में लगाना चाहा जिससे आपका दिन आसानी से बीत जाये और दिमागी कार्य भी न करना पड़े। अत: गुरु जी ने भैंसें चराने का काम आपको सौंप दिया। पिता जी का कहना मानकर आप दूसरे ही दिन भैंसें लेकर उन्हें चराने चले गए।

गुरु जी मौज में मस्त रहते थे, पर श्री मेहता कालू जी उनके खिलाफ आती शिकायतों से बहुत चिन्तित थे। इसलिए एक दिन श्री मेहता कालू जी ने कहा, "पुत्र! अगर तुम भैंसें चराना नहीं चाहते तो खेती का काम कर लिया करो। मैं तुम्हें इस काम के लिए जुताई का सारा सामान तैयार कर देता हूं।" गुरु जी ने कहा, "पिता जी! मैं सच्ची खेती करना चाहता हूं, जिसकी बोई हुई फसल आगे भी काम आए।" श्री मेहता कालू जी ने पूछा कि वह सच्ची खेती कौन सी है! तब आपने सोरठि राग में इस शबद का उच्चारण किया :

मनु हाली किरसाणी करणी सरमु पाणी तनु खेतु ॥
नामु बीजु संतोखु सुहागा रखु गरीबी वेसु ॥
भाउ करम करि जंमसी से घर भागठ देखु ॥
बाबा माइआ साथि न होइ ॥
इनि माइआ जगु मोहिआ विरला बूझै कोइ ॥
(पन्ना ५९५)

अर्थात् पिता जी! मन को हाली या हल चलाने वाला करके खेती करनी चाहिए। अपने शरीर को जोत कर उसमें जप-तप का जल देना चाहिए। उसमें ईश्वर के नाम का बीज बोकर, संतोष का सुहागा फेरें। मन में नम्रता धारण करें। अगर यह प्रेम से की गई खेती उग जाए तो फसल से घर सम्पन्न हो जाता है। पिता जी! यह सांसारिक माया जो आप खेती करके एकत्र करना चाहते हैं, अंत में साथ नहीं देती। इस सांसारिक माया ने जगत को मोह लिया है, कोई विरला ही इस बात को समझ सकता है।

श्री मेहता कालू जी ने यह समझा कि गुरु जी खेती का कठिन कार्य नहीं करना चाहते। अत: वे टालमटोल कर रहे हैं। इनको एक स्थान पर बैठने का काम दिया जाये। अत: दुकानदारी का काम ही उत्तम रहेगा। यह विचार करने के बाद पिता जी ने कहा, "पुत्र! अगर खेती का कठिन कार्य नहीं चाहते तो आसान सा कार्य दुकानदारी कर लो।" तब गुरु जी ने निम्नलिखित शबद उच्चारण किया :

हाणु हटु करि आरजा सचु नामु करि वथु ॥
सुरति सोच करि भांडसाल तिसु विचि तिस नो रखु ॥
वणजारिआ सिउ वणजु करि लै लाहा मन हसु ॥ (पन्ना ५९५)

अर्थात् अपनी आयु जो घटती जा रही है, इसकी दुकान करके, उसमें 'सच्चे नाम' का सौदा डालें। श्रेष्ठ विचारों को सौदा रखने वाली जगह बनाकर उसमें 'नाम' सौदे को रखें। इस सौदे का ग्राहकों से लेन-देन करके लाभ प्राप्त करें, जो आगे परलोक में भी साथी होता है।

यह विचार आपके पिता जी ने सुने तो फिर सोच-समझ कर कहा, "पुत्र! अगर सिर्फ

बैठने का भी काम तुम नहीं करना चाहते तो कुछ रुपये ले लो और घोड़ों की सौदागरी का काम जो धनी लोग करते हैं, वह कर लो।" इसका उत्तर आप ने निम्नलिखित शबद में दिया:

सुणि सासत सउदागरी सतु घोड़े लै चलु ॥
खरचु बंनु चंगिआईआ मतु मन जाणहि कलु ॥
निरंकार कै देसि जाहि ता सुखि लहहि महलु ॥
(पन्ना ५९५)

अर्थात् पिता जी! सच्चे रूहानी ज्ञान से युक्त ग्रंथों का सुनना सौदागरी है और वहां से सच्चाई की प्राप्ति घोड़े हैं। नेकियों का खर्च साथ लेकर इन घोड़ों को खरीदें। यह न समझें कि यह सौदा कल करेंगे, क्या पता कल आए ही नहीं! इस तरह निरंकार के देश सचखंड में जाकर परम-सुख की प्राप्ति होती है।

यह सुनकर श्री मेहता कालू जी समझ गए कि श्री गुरु नानक देव जी घोड़े खरीद कर देश-विदेश में घूमते फिरना भी पसंद नहीं करते। तब श्री मेहता कालू जी ने कहा, "पुत्र! यदि यह काम भी पसंद नहीं तो किसी की नौकरी ही कर लो।" गुरु जी ने निम्नलिखित शबद का उच्चारण किया :

लाइ चितु करि चाकरी मंनि नामु करि कंमु ॥
बंनु बदीआ करि धावणी ता को आखै धंनु ॥
नानक वेखै नदरि करि चड़ै चवगण वंनु ॥४॥२॥
(पन्ना ५९५-९६)

अर्थात् मन को परमात्मा के ध्यान में लगाना ही नौकरी है और नाम को मानना उस मालिक के प्रति काम है। बुराई को बांध कर जो नाम-स्मरण के काम को फुर्ती से करता है, उसको प्रत्येक व्यक्ति या जीव धन्य-धन्य कहता है, तो उसको नाम का चार गुना ज्यादा रंग चढ़ता है।

अपनी मौज में अन्तर्मुख-वृत्ति करके गुरु जी एकांत में चुप-चाप घर में लेटे रहते थे। खाना-पीना बहुत कम कर दिया, जिसके कारण आपका शरीर दुर्बल और कमजोर होने लगा। श्री मेहता कालू जी ने वैद्य हरिदास को बुला कर कहा, "वैद्य जी, नानक जी को देखिए, इनको क्या रोग है? ये अपने आप कुछ बताते नहीं पर दिनों-दिन कमजोर होते जा रहे हैं।" वैद्य ने जब आपकी नब्ज देखी तो उनको रोग का कोई पता नहीं चला। जब वह फिर से बाजू पकड़ नब्ज देखने लगा तो गुरु जी ने शबद उच्चारण किया :

वैदु बुलाइआ वैदगी पकड़ि ढंढोले बांह ॥
भोला वैदु न जाणई करक कलेजे माहि ॥१॥
(पन्ना १२७९)

अर्थात् गुरु जी ने सोच में डूबे हुए वैद्य को देखकर कहा, "आप तो भोले वैद्य हैं, जो बाजू पकड़ कर रोग ढूंढ रहे हैं। आप नहीं जानते कि रोगी को वह कौन सा रोग (दुख) है जो उसके हृदय को पीड़ित कर रहा है।" वैद्य ने कहा कि अगर आपको अंदरूनी रोग है तो मैं आपको खाने वाली दवा देता हूं, जिससे हृदय को शान्ति मिल जाएगी। तब गुरु जी ने यह शबद उच्चारण किया :

दुखु वेछोड़ा इकु दुखु भूख ॥
इकु दुखु सकतवार जमदूत ॥
इकु दुखु रोगु लगै तनि धाइ ॥
वैद न भोले दारू लाइ ॥१॥
वैद न भोले दारू लाइ ॥
दरदु होवै दुखु रहै सरीर ॥
ऐसा दारू लगै न बीर ॥१॥रहाउ॥
खसमु विसारि कीए रस भोग ॥
तां तनि उठि खलोए रोग ॥
मन अंधे कउ मिलै सजाइ ॥

वैद न भोले दारू लाइ ॥२॥
चंदन का फलु चंदन वासु ॥
माणस का फलु घट महि सासु ॥
सासि गइऐ काइआ ढलि पाइ ॥
ता कै पाछै कोइ न खाइ ॥३॥
कंचन काइआ निरमल हंसु ॥
जिसु महि नामु निरंजन अंसु ॥
दूख रोग सभि गइआ गवाइ ॥
नानक छूटसि साचै नाइ ॥४॥२॥ (पन्ना १२५६)

अर्थात् वैद्य जी! मुझे एक दुख अपने प्रियतम से बिछुड़ने का है, एक दुख उसके दर्शन की तृष्णा का है, एक दुख मुझे शक्तिशाली यमदूत का है, जो जब चाहे आदमी को पकड़ कर ले जाता है। एक दुख यह भी है कि पता नहीं कब रोग शरीर पर हावी हो जाए! इसलिए वैद्य जी, आप मुझे कोई दवा न दें। ऐसी दवा खाने से क्या लाभ जिससे शरीर का रोग दूर न हो! जिन्होंने ईश्वर को भुला कर भोग-विलास को अपनाया है, उनके शरीर में कई प्रकार के रोग आ जाते हैं। ईश्वर को भुलाने वाले लोगों को इन रोगों से सजा मिलती है। इसलिए हे भोले वैद्य! मुझे कोई दवा न दें। जिस प्रकार चंदन के वृक्ष का फल सुगन्धित होता है उसी प्रकार पुरुष का फल उसके अंदर श्वास है। श्वासों के खत्म हो जाने से शरीर गिर जाता है और बाद में कोई कुछ नहीं खाता। अगर शरीर स्वर्ण की भांति स्वस्थ हो तो वह जीव भी अच्छा होता है, जिसके हृदय में ईश्वर के नाम का स्थान हो। ऐसा मनुष्य दुख-रोग सब कुछ समाप्त करके ही आगे जाता है। प्रभु-स्मरण द्वारा ही इन कष्टों से मुक्ति मिलती है।

गुरु जी से अपने रोग के विषय में सुनकर भोला वैद्य चुप का चुप रह गया और जाता हुआ यह बतला गया कि इनका रोग मेरे वश की बात नहीं। ये किसी और ही रोग की बात करते हैं। वैद्य की यह बात सुनकर श्री मेहता कालू जी की चिंता बढ़ गई। वे बहुत परेशान हुए।

गुरु जी ने दो-तीन मास पश्चात स्वयं ही खाना-पीना और बोलना आरंभ कर दिया तो मेहता कालू जी ने गुरु जी को किसी काम में लगाने की इच्छा से बीस रुपये दिए और कहा कि इनसे कोई लाभदायक व्यापार करके अपना काम चलाएं। इस प्रकार इनका दिल भी बहल जाएगा और कमाई का साधन बन जाएगा।

गुरु जी लाहौर की ओर लाभदायक सौदा करने जा रहे थे। आपको चूहड़काणा गांव के बाहर एक साधू-मण्डली मिली, जिनके पास खाने-पीने की सामग्री न थी। गुरु जी ने बीस रुपये की खाद्य-सामग्री खरीद कर साधुओं को दे दी। गुरु जी तलवंडी वापस आ गए। इस घटना के कारण चूहड़काणे में गुरुद्वारा सच्चा सौदा साहिब शोभायमान है।

भाई बाला जी ने तलवंडी पहुंचकर श्री मेहता जी को इस घटना के बारे में बताया तो श्री मेहता कालू जी श्री गुरु नानक देव जी के साथ बहुत नाराज हुए। जब इस बात का भाई राय बुलार को पता चला तो उन्होंने श्री मेहता कालू को बुलाकर कहा कि श्री गुरु नानक देव जी प्रभु के नूर हैं, इनको कोई गलत बात न कहा करें। आगे से ये कोई नुकसान भी करें तो मुझसे पूरा कर लें, परन्तु श्री गुरु नानक देव जी को कुछ न कहें। मेहता जी ने कहा, "राय जी! मैं स्वयं दुखी होकर इनके भले के लिए ही कुछ कहता हूं। मेरे लिए इनसे बढ़ कर और कौन अच्छा है!"

मेहता कालू जी ने लाचार होकर भाई

(शेष पृष्ठ १५ पर)

'नाम जपना, किरत करना, वंड छकना' के प्रवर्त्तक श्री गुरु नानक देव जी

*-स. रमेश सिंघ**

श्री गुरु नानक देव जी का इस दुनिया में आगमन १४६९ ई में तलवंडी ग्राम (अब पाकिस्तान) में हुआ था, जो ननकाणा साहिब के नाम से विख्यात है। आपके पिता थे महिता कालू जी और माता तृप्ता जी थीं। जब गुरु जी इस संसार में आये तो चारों ओर हाहाकार मचा हुआ था, जनता त्राहि-त्राहि कर रही थी। एक तो शासक वर्ग के अत्याचारों से लोग त्रस्त थे तो दूसरी ओर धर्म के ठेकेदार धर्म के नाम पर लोगों को लूट रहे थे। धर्म बस, कर्मकांड बन कर रह गया था और सिद्ध पुरुष, जिन पर लोगों को धर्म की वास्तविकता से अवगत कराने का दायित्व था, वे पर्वतों पर निवास करने लगे थे। आम मनुष्य जहां तन की मार से बेहाल था, वहीं आत्म-बल से भी हीन हो चुका था। जनता को राह दिखाने वाला, सहारा देने वाला, उसे गले लगाकर प्यार करने वाला कोई न था। इस दयनीय अवस्था में लोगों का मसीहा बनकर अवतरित हुए श्री गुरु नानक देव जी। प्रभु ने उन्हें जनमानस को सत्य-मार्ग दिखाने के लिए भेजा। भाई गुरदास जी (सिख जगत के जाने-माने विद्वान) लिखते हैं : *"सुणी पुकारि दातार प्रभु गुरु नानक जग माहि पठाइआ।"* तथा गुरु जी ने स्वयं बुलंद आवाज में कहा—*"नीचा अंदरि नीच जाति नीची हू अति नीचु ॥ नानक तिन कै संगि साथि वडिआ सिउ किआ रीस ॥ जिथै नीच समालीअनि तिथै नदरि तेरी बखसीस ॥"* अर्थात् समाज की नज़रों में जो तथाकथित निम्न से निम्न वर्ग के लोग हैं, अति नीच कहलाते हैं, मैं उनका पक्षधर हूं, मेरा बड़े लोगों से क्या वास्ता? क्योंकि जहां (तथाकथित) नीच रहते हैं वहां प्रभु की कृपा बरसती है। जब समय आया तो गुरु जी ने यह कर दिखाया। वे भाई लालो (एक गरीब बढ़ई), जो उन्हें याद किया करता था, के घर जा पहुंचे और उसी शहर के एक जमींदार मलिक भागो का आतिथ्य यह कर ठुकरा दिया कि तुमने गरीबों का खून चूस कर धर्मोपार्जन किया है।

गुरु जी ने जहां एक ओर शासकों के जुल्मों के खिलाफ आवाज उठाई, बाबर को यह कह कर ललकारा कि वह पाप की बारात लेकर काबुल से आया है और हिन्दुस्तान की निरीह जनता पर जुल्म ढाह रहा है—*"पाप की जंञ लै काबलहु धाइआ जोरी मंगै दानु वे लालो ॥"* वहीं दूसरी ओर धर्म का ढिंढोरा पीटने वाले काजी और ब्राह्मण दोनों को यह कहने में संकोच नहीं किया कि आप केवल धर्म का दम भरते हैं, पर आपकी बातों में अब कोई दम नहीं (क्योंकि आपका जीवन धर्म का प्रतीक नहीं), आप पर (माया) शैतान हावी हो गया है। सत्य का पक्षधर बनने की खातिर जेल में बंदी बने और सत्य का झंडा बुलंद करने की ताकत प्रदान की लोगों को। खुद आगे आकर लोगों को वह नेतृत्व प्रदान किया जिसकी उन्हें जरूरत थी।

जब तक मनुष्य में आत्म-बल न हो तब

*C-131, Sonari West, Jamshedpur-831011 (Jharkhand)

तक वह जीवन की चुनौतियों का सामना नहीं कर सकता। धर्म में ही वह शक्ति है, वह ज्ञान है जो इंसान को सही दिशा व दशा प्रदान करती है कि वह चुनौतियों से घबराता नहीं, डट कर उनका सामना करता है और उन पर विजय प्राप्त करता है। गुरु जी ने हिन्दू और मुसलमान दोनों को धर्म की वास्तविकता से परिचित कराया। धर्म कर्मकांड नहीं, एक जीवन-पद्धति है जो मनुष्य को सत्य-मार्ग का पथिक बनाती है। सत्य को जानने से भी अधिक महत्वपूर्ण है सत्य मार्ग पर चलना- *"सचहु ओरै सभु को उपरि सचु आचारु ॥"* अर्थात् सत्य सर्वोपरि है पर उससे भी ऊपर है सत्य का आचरण। उन्होंने हिन्दुओं को सही अर्थ में हिन्दू तथा मुसलमानों को सच्चा मुसलमान बनने का उपदेश दिया। गुरु जी ने प्रभु की एकता की बात समझाई कि सारी सृष्टि का सृजनहार प्रभु तो एक है, हम उसे अल्लाह कहें या राम या और कोई भी नाम दें। फिर धर्म के नाम पर लड़ाई क्यों? इसीलिए जब उन्हें नमाज पढ़ने के लिए मस्जिद में आमंत्रित किया गया तो वे सहर्ष तैयार हो गये यह दृढ़ कराने के लिए कि सारी मानवता का धर्म तो एक है—प्यार तथा हम सबकी जाति भी एक है—मानवता। हिन्दू और मुसलमान दोनों को एक स्थान पर लाने वाले वे पहले धर्म-पिता थे, इसलिए दोनों ने उन्हें अपना मानते हुए कहा: *"नानक शाह फकीर। हिन्दू का गुरु, मुसलमान का पीर।"*

मनुष्य अवगुणों की खान है, प्रभु गुणों के सागर हैं। आदर्श मानव की यात्रा अपने अवगुणों की पहचान से शुरू होती है, जैसे-जैसे मनुष्य उनसे परिचित और लज्जित होकर उनका त्याग करता है तथा गुणों को धारण करता है, वह प्रभु के निकट होता जाता है। यही यात्रा है प्रभु-मार्ग की। गुरु जी ने आदर्श मानव का जो खाका प्रस्तुत किया दुनिया के सामने उसके तीन स्तंभ थे—"नाम जपना, किरत करना (रोजी-रोटी कमाना) और वंड छकना (बांट कर खाना)।" नाम जपने का सरल शब्दों में अर्थ है प्रभु के उपदेशों पर जीवन ढालना। प्रभु की बातों को सुनना, गाना, प्रवचन करना काफी नहीं, अधिक अहम बात है उन पर अमल करना। गुरु जी ने कहा, *"नानक के घर केवल नाम"* अर्थात् भाई मेरी समझ से तो अमल, अमल, अमल, बस अमल करके ही हम प्रभु तक पहुंच सकते हैं। जब तक प्रभु के उपदेशों पर अमल नहीं करते हमारा जीवन सुखमय, शांतिमय, आनंदमय नहीं हो सकता, क्योंकि इन सबका स्रोत प्रभु हैं।

गुरु जी से जब मक्का में यह सवाल पूछा गया कि हिन्दू और मुसलमान दोनों में बड़ा कौन है, तो उनका उत्तर था, जो भी शुभ अमल नहीं करेगा उसका जीवन दुखमय होगा, उसे जीवन में रोना पड़ेगा, भले ही उसका धार्मिक लेबल कुछ भी हो। गुरु जी ने लगभग २५ साल संसार के विभिन्न देशों का भ्रमण कर यह दृढ़ कराने की कोशिश की कि यदि हमारा जीवन प्रभु-उपदेशों पर अमल नहीं करता तो धर्म के नाम पर हम जो भी कर रहे हैं वह मात्र कर्मकांड बन कर रह जायेगा। आइए, जरा गुरु जी के उपदेशों की एक छोटी सी झलक लें :

१. *नाम बिना नही जीविआ जाए ॥* (नाम अर्थात् गुरु-उपदेशों पर अमल किये बिना कोई सुखी नहीं हो सकता।)

२. *नाम बिना कैसे आचार ॥* (नाम के बिना आचरण शुद्ध कैसे हो सकता है?)

३. *पूजा कीचै नाम धिआईऐ बिन नावै पूज न होई ॥* (नाम अर्थात् प्रभु-उपदेश पर अमल किये बिना पूजा का क्या अर्थ? नाम के बिना पूजा हो ही नहीं सकती।)

४. *जपहु त एको नामा ॥ अवर निराफल कामा ॥* (भाई! तुम्हारा पूरा ध्यान प्रभु-उपदेशों के पालन में रहना चाहिए वरन् मानव जीवन व्यर्थ चला जायेगा।)

५. *नाम हीन कालख मुख माइआ ॥* (भाई! अगर प्रभु-उपदेशों पर अमल नहीं करोगे तो माया की कालिख तुम्हारे मुंह पर लग जायेगी।)

व्यक्ति उसी की बात मानता है जिससे वह प्यार करता है। हम अपने बच्चों की बातें मानते हैं क्योंकि हमें उनसे प्यार है। गुरु साहिब ने कहा, जिसे प्रभु से प्यार होगा वह प्रभु की बात मानेगा, उसे जीवन में अपनायेगा। यदि मैं प्रभु के उपदेशों पर अमल नहीं करता तो मेरे यह कहने का कोई अर्थ नहीं कि "मैं तो प्रभु को मानता हूं", " मुझे प्रभु से प्यार है"। प्रभु का उपदेश हमें सिखाता है, विनम्रता धारण करो, सारी मानवता को (सारे भेदभाव भुलाकर) प्यार करो, अहंकार छोड़ो, मैं-मेरी से प्यार तोड़ो, काम-क्रोध-लोभ-मोह में मत फंसो, निंदा-चुगली, ईर्ष्या-द्वेष, वैर-विरोध से दूर रहो . . .। यदि मैं इन्हें अपने दैनिक जीवन में धारण नहीं करता तो मेरे नाम जपने, मेरे सुमिरन करने का क्या अर्थ? इस तरह समझ कर जो नाम जपता है उसकी जिंदगी सुखमय, आनंदमय, प्रेममय, चिंतारहित, शिकायतरहित हो जाती है, वह प्रभु की आज्ञा को सहर्ष स्वीकार करता है और इस प्रकार नाम जप कर भवसागर से पार हो जाता है, इसीलिए गुरु जी ने कहा था: *"तेरा एकु नामु तारे संसारु ॥ मै एहा आस एहो आधारु ॥"* (प्रभु! केवल तुम्हारा नाम ही हमें संसार-सागर से पार करा सकता है, अत: मैंने इसी पर आस टिकाई है और यही मेरे जीवन का आधार भी है।)

सीधे-सरल शब्दों में 'नाम जपना' का अर्थ कुछ इस प्रकार समझ सकते हैं :

"अपने दुख में रोने वाले मुस्कराना सीख ले।
दूसरों के दर्द पे आंसू बहाना सीख ले।
जो खिलाने में मजा है आप खाने में नहीं,
जिन्दगी में दूसरों के काम आना सीख ले।
कर गरीबों का भला और बदनसीबों पे रहम,
सेवा में भगवान है, तू सेवा कमाना सीख ले।"

"किरत करना" का अर्थ है अपनी आजीविका मेहनत और ईमानदारी से कमाना। प्रभु चाहते हैं कि यह सृष्टि चलती रहे, इसलिए गुरु साहिब ने कहा, हमें उसकी आज्ञा को मानते हुए इस शरीर का पालन और अपने परिवार का भरण-पोषण करने के लिए अपनी रोजी-रोटी पूरी मेहनत और ईमानदारी से कमानी चाहिए। हमें निठल्ला नहीं बनना है। श्रम करना जरूरी है और बेईमानी से समाज में अराजकता फैलती है, इसलिए पूरी ईमानदारी से अपना काम करना है। गुरु साहिब की शिक्षा है— *"घालि खाइ किछु हथहु देइ ॥ नानक राहु पछाणहि सेइ ॥"* (धर्म का मार्ग तो यही है कि व्यक्ति मेहनत और ईमानदारी से कमाये और फिर बांट कर खाये।) साथ ही नाम जपने वाला अर्थात् प्रभु से प्रेम करने वाला, कैसे उसके आदेशों और उपदेशों की अवहेलना और उल्लंघना करते हुए बेईमानी, ठगी, चोरी, हेरा-फेरी, जालसाजी आदि कर सकता है? क्योंकि गुरु का उपदेश ह—*"हकु पराइआ नानका उसु सूअर उसु गाइ ॥"* (दूसरे का हक मारना हिन्दू के लिए गोमांस और मुस्लिम के लिए सूअर खाने

के बराबर है।) गुरु जी ने खुद 'किरत करना' के सिद्धांत पर अमल करते हुए अपने जीवन में नौकरी भी की, खेती भी की, व्यवसाय भी किया, गृहस्थी बने और अपने गृहस्थ जीवन का निर्वाह करते हुए 'नाम जपना' की शिक्षा का व्यवहारिक रूप संसार के सामने प्रस्तुत किया।

'वंड छकना' का अर्थ है बांट कर खाना। गुरु साहिब का आशय यह था कि नाम जपने वाला अर्थात् प्रभु-प्रेमी कैसे अपने अगल-बगल की दुनिया के दुख-दर्द से उदासीन रह सकता है? इसलिए उन्होंने कहा कि जीवन का सारा समय सिर्फ अपने कल्याण पर ही न लगा देना भाई, समय को बांटना, दूसरों का भला करने में तुम्हारे पास जो कुछ भी है प्रभु की देन है, इसे बांटना। लोगों का दुख-दर्द बांटना, दूसरों का सुख यकीनी बनाना, भूखों में भोजन बांटना, वस्त्र-विहीनों में वस्त्र बांटना, रोगी को दवा बांटना, उदास को खुशी बांटना, जो प्रभु से दूर हैं उनमें नाम बांटना . . . । इस तरह सारी जिंदगी बांटते रहना, क्योंकि बांटने में सुख है, बांटने में आनंद है। वस्तुत: 'किरत करना' और 'वंड छकना', 'नाम जपना' के ही अभिन्न अंग हैं।

इस प्रकार की जो जीवनशैली अपना लेगा, उसका मानव-जीवन धन्य-धन्य हो जायेगा, वह इस लोक में तो सुखी रहेगा ही, उसका परलोक भी संवर जायेगा। अगर वह अपना पूरा जीवन प्रभु-उपदेशों को समर्पित कर दे तो उसका जन्म-मरण का चक्र ही समाप्त हो जायेगा। प्रभु कृपा करें, श्री गुरु नानक देव जी का प्रकाशोत्सव मनाते हुए हम सभी का जीवन उनके उपदेशों को समर्पित हो जाये, यही प्रार्थना है।

श्री गुरु नानक देव जी का लासानी प्रारंभिक जीवन *(पृष्ठ ११ का शेष)*

राय बुलार की सलाह से गुरु जी को बहन नानकी और बहनोई भाई जयराम जी के साथ सुल्तानपुर भेज दिया और कहा कि इनको अपने पास ही किसी काम में लगा दें। भाई राय बुलार की प्रेरणा से बहन नानकी और भाई जयराम जी गुरु जी को प्रसन्नतापूर्वक अपने पास सुलतानपुर ले आए।

भाई जयराम जी दौलत खान के दीवान थे। आपने दौलत खान को कहकर गुरु जी को संवत् १५४२ में उसका मोदी (अर्थात् शाही लंगर और फौज को खाने-पहनने का सामान देने वाला) लगवा दिया। गुरु जी जब सौदा तोल कर ग्राहकों को दे देते तब वे 'तेरा-तेरा' कहते जाते। चौदह कहने की याद ही भूल जाते थे। यदि कोई पूछता, "मोदी जी! 'तेरा-तेरा' ही कहते जाते हैं, आगे की गिनती क्यों नहीं गिनते?" तब आप कहते :

नानकु तेरा बाणीआ तू साहिबु मै रासि ॥
मन ते धोखा ता लहै जा सिफति करी अरदासि ॥
(पन्ना ५५७)

इस शबद का भावार्थ यह है कि श्री गुरु नानक देव जी प्रभु को अपनी पूंजी मानते हैं और स्वयं को प्रभु का बाणीआ (सौदा बेचने वाला)। गुरु जी कहते हैं कि लोगों के मन में यह भ्रम है कि मैं 'तेरा-तेरा' ही करता रहता हूं, चौदह नहीं कहता। यह भ्रम तब ही दूर हो पाएगा जब लोग तेरी (प्रभु की) भक्ति में लग जाएंगे।

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के नौनिहालों की शहादत

*-डॉ. तिलकराज गोस्वामी**

१८वीं शताब्दी का प्रथम दशक शुरू हो चुका था। उत्तरी भारत में श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की दिनों-दिन बढ़ती शक्ति एवं ख्याति मुगल सम्राट औरंगजेब के हृदय में शूल की भांति चुभ रही थी। वह किसी भी तरह गुरु जी की इस शक्ति का दमन करना चाहता था। अत: उसने पंजाब क्षेत्र के सूबेदारों तथा महत्वपूर्ण अधिकारियों को शाही फरमान भिजवाये कि वे किसी भी तरह अनंदपुर साहिब को बर्बाद कर श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी को जीवित अथवा मृत शाही दरबार में पेश करें। फरमान पाकर सूबेदार तथा मुगल सैनिक गुरु जी को परास्त करने को आतुर हो रहे थे लेकिन उन्हें उपयुक्त अवसर नहीं मिल पा रहा था।

यह अवसर उन्हें मिला सन् १७०४ में। शीत ऋतु अपने पूरे उभार पर थी। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी अपने कुछ सैनिकों सहित अनंदपुर साहिब के किले में थे कि अचानक लाहौर तथा सरहिंद के हाकिमों ने एक बड़े लश्कर के साथ उन पर आक्रमण कर दिया। इस अप्रत्याशित आक्रमण के लिए सिख सैनिक पूरी तरह तैयार नहीं थे। फिर भी अपने से बीस गुना अधिक मुगल सेना का उन्होंने डटकर सामना किया। लड़ाई कई दिनों तक चलती रही। कोई रसद या सामान किले में नहीं जा पाता था। अपने साथियों के आग्रह से विवश होकर श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी जब एक दिन अर्द्ध रात्रि को अपने परिवार सहित किले से निकलकर अन्यत्र जाने को तैयार हो रहे थे कि मुगल सेना को खबर मिल गयी। मगर इसके पूर्व कि मुगल उन्हें पकड़ पाते, गुरु जी वहां से बीस-पच्चीस मील दूर चमकौर नामक स्थान पर पहुंच चुके थे। सरसा नदी पार करते समय उनके परिवार के कुछ सदस्य उनसे अलग हो गये। माता गुजरी जी को अपने पोते साहिबजादा जोरावर सिंघ तथा साहिबजादा फतेह सिंघ सहित एक पुराने सेवक के यहां शरण लेनी पड़ी। किन्तु इस सेवक ने मोरिंडा के मुस्लिम अधिकारी को सूचित कर विश्वासघात किया और अधिकारी ने इन तीनों को सरहिंद के हाकिम वजीर खां के हवाले कर दिया। वजीर खां ने निरपराध बालकों से कहा कि वे इस्लाम धर्म स्वीकार कर लें अन्यथा उन्हें प्राणदण्ड दिया जायेगा। उन्हें अनेक प्रकार के प्रलोभन भी दिये गये किन्तु वीर बालकों ने पंचम गुरु श्री गुरु अरजन देव जी तथा अपने पितामह श्री गुरु तेग बहादर जी की परम्परा का अनुसरण करते हुये मृत्यु को बरा। वजीर खां ने उन अबोध बालकों को दीवार में चुनने का आदेश दे दिया। इन बालकों को अगल-बगल खड़ा करके दीवार में चुना। धर्म के निमित्त प्राण न्योछावर कर दोनों साहिबजादों ने अमरत्व प्राप्त कर लिया।

उधर चमकौर के मैदान में श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की सेना लड़ते-लड़ते लगभग समाप्त हो चुकी थी। बड़े साहिबजादे बाबा अजीत सिंघ ने श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी से कहा, "पिता जी! रण-क्षेत्र से भागना तो हमने सीखा नहीं, शत्रु के सामने समर्पण को मैं कायरता मानता हूं, कृप्या आप मुझे आज्ञा प्रदान करें तथा आशीर्वाद दें कि मैं मुगलों से युद्ध करता हुआ स्वधर्म व स्वदेश की बलिवेदी पर न्योछावर

*'आकांक्षा' ९१-सी/८-सी, सर्वोदय नगर, भारद्वाजपुरम, इलाहाबाद-२११००६ (उ. प्र.)

हो जाऊं।" वीर पुत्र की साहसपूर्ण बात सुनकर पिता-गुरु पुलकित हो उठे। पुत्र को अपने सीने से लगाते हुए उन्होंने कहा, "शाबाश बेटे, तुम्हीं नहीं मैं भी धन्य हूं, यह जाति भी धन्य है, जिसे तुम जैसा वीर पुत्र मिला। जाओ, स्वधर्म एवं स्वदेश के लिए अपने प्राणों की आहुति दे दो।" फिर क्या था, वीर बाबा अजीत सिंघ शत्रु पर भूखे सिंघ की भांति टूट पड़े। देखते ही देखते उन्होंने बीसों यवनों को गाजर-मूली की तरह काट डाला। छोटे भाई बाबा जुझार सिंघ कैसे पीछे रहते! उन्होंने भी बड़े भाई का अनुसरण करते हुए कितने ही मुगल सैनिकों को मौत के घाट उतार दिया। अन्त में वे दोनों भी लड़ते-लड़ते वीरगति को प्राप्त हो गये।

समय-चक्र अपनी गति से चलता रहा। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी नांदेड़ में गोदावरी के तट पर माधो दास बैरागी को मिले। माधो दास को अमृत-पान कराकर सिंघ सजाया। वो बाबा बंदा सिंघ बहादुर के नाम से प्रसिद्ध हुआ। सिख-शिरोमणि की प्रेरणा से प्रभावित होकर उसने दृढ़ संकल्प लिया कि वह हर सम्भव उपाय से उस शासन को उखाड़ फेंकेगा जिसने श्री गुरु तेग बहादर जी (श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के पिता) को शहीद करवाया और श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के निरपराध अबोध बालकों को दीवार में चुनवाकर शहीद कर दिया।

आखिर अवसर पाकर ३० मई, सन् १७१० को बाबा बंदा सिंघ बहादुर ने अपने सैनिकों सहित सरहिंद क्षेत्र में प्रवेश किया। वजीर खां के नेतृत्व में मुगल सेना भी वहां पहुंच गयी। मुगल सेना सैंकड़ों तोपों से लैस थी, जबकि बाबा बंदा सिंघ बहादुर के पास तोप-हाथी तो क्या कुशल अश्वारोही भी कम थे। किन्तु जैसा प्राय: युद्ध में होता है दृढ़ संकल्प, साहस व उत्तम नेतृत्व एवं कुशल युद्ध-नीति के समक्ष बड़ी-बड़ी तोपों के मुंह भी घूम जाते हैं। ऐसा ही चमत्कार सरहिंद के इस ऐतिहासिक युद्ध में हुआ। बाबा बंदा सिंघ बहादुर के कुशल नेतृवय और उनके साथी सिंघों ने अपने शौर्य का परिचय दिया और इस युद्ध में धार्मिक उत्साह-भावना ने भारी-भरकम तोपों और हजारों मुगल सैनिकों पर विजयश्री प्राप्त की। बाल शहीदों का नृशंस हत्यारा वजीर खां मारा गया और सम्पूर्ण सरहिंद क्षेत्र बाबा बंदा सिंघ बहादुर के अधिपत्य में आ गया।

पंजाब में फतेहगढ़ साहिब नामक स्थान पर श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के नौनिहालों को दीवार में चुना गया था। उस स्थान पर एक गुरुद्वारा निर्मित है जिसे गुरुद्वारा फतेहगढ़ साहिब कहा जाता है। गुरुद्वारा साहिब के बिलकुल समीप ही दाईं ओर वीर माता गुजरी जी की पुण्य स्मृति में निर्मित माता गुजरी कालेज है। कालेज भवन देखकर उस वीर माता जी की याद आ जाती है जिन्हें अमर बलिदानी श्री गुरु तेग बहादर जी के महिल होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ, जिनकी कोख से दशमेश पिता श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी का प्रादुर्भाव हुआ, जिन्हें साहिबजादा अजीत सिंघ, साहिबजादा जुझार सिंघ, साहिबजादा जोरावर सिंघ तथा साहिबजादा फतेह सिंघ जैसे बाल शहीदों की दादी होने का गौरव मिला। गुरुद्वारा फतेहगढ़ साहिब के प्रवेश-द्वार का नाम बाबा बंदा सिंघ बहादुर द्वार है। यह द्वार उस महापुरुष के शौर्य का प्रतीक है जिसने अद्‌भुत साहस, उच्च विचारधारा एवं गहन निष्ठा से उत्तरी भारत की जनता में क्रांति की एक धारा प्रवाहित कर दी थी, जिसने श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी महाराज के उद्‌देश्यों एवं सिद्धांतों को क्रियात्मक रूप दिया था। सिख गुरु साहिबान द्वारा प्रयुक्त बहुत से शस्त्र गुरुद्वारा साहिब में सुरक्षित हैं। गुरुद्वारे के भीतर नीचे एक तहखाने में वह मनहूस दीवार ज्यों की त्यों है जिसमें निरापराध अबोध बालकों को वजीर खां ने जीवित चुनवा दिया था।

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के चार वीर सपूतों की अमर बलिदानी गाथा

-*श्री हरिचंद स्नेही**

शहीदों की चिताओं पर, लगेंगे हर बरस मेले,
वतन पर मिटने वालों का, यही बाकी निशां होगा!

अगर हम सिख कौम का इतिहास पढ़ने लगें तो रौंगटे खड़े होते हैं। मुगलों द्वारा उनके शरीर की बोटियां काटना, गर्म तवे पर अग्नि-परीक्षा, शीश काटना और अन्य अनेक प्रकार की अमानवीय यातनाएं, क्रूरता की आततायी मिसालें दिल की धड़कनों को रोक लेती हैं। उन महान बलिदानी वीरों ने धर्म की रक्षा के लिये हर जुल्म-सितम को हंसते-हंसते सह कर अपना सर्वस्व अर्पण कर दिया। सिखों के दसवें गुरु, वीर शिरोमणि श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की अपने पूज्य पिता श्री गुरु तेग बहादर जी के साथ धर्म की रक्षा के लिए बचपन की यादें हमारा मार्गदर्शन करती हैं। गुरुद्वारा सीसगंज साहिब, दिल्ली उनकी कुर्बानी की याद युगों-युगों तक दिलाता रहेगा :

इन्सान की खुशबू रहती है, इन्सान बदलते रहते हैं।
दरबार लगा रह जाता है, दरबान बदलते रहते हैं।
वे हिम्मत वाले माझी हैं, तूफानों से टकराते हैं,
इन्सानों का तो क्या कहना, तूफान बदलते रहते हैं।

जब-जब भी श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के नन्हें-मुन्हें लालों की याद आती है, दिल भर आता है और आंखों से आंसुओं की बरसात शुरू हो जाती है। जिन मासूम कलियों ने फूल बनकर खिलना था उनको बेरहमी से शहीद कर दिया और पिता के सामने बल्कि स्वयं पिता ने धर्म की रक्षा के लिए अपने दुलारों को सजा-धजा कर धर्म की बलिवेदी पर कुर्बान होने के लिए भेजा तथा गौरवान्वित हुए। धन्य हैं उनके माता-पिता, धन्य है उनका परिवार और धन्य हैं वे राज दुलारे, आंखों के तारे!

ऐ मेरे वतन के लोगो, जरा आंख में भर लो पानी।
जो शहीद हुए हैं उनकी, जरा याद करो कुर्बानी।

चमकौर के युद्ध में पिता-गुरु ने साहिबजादा अजीत सिंघ को पीठ थपथपाते हुए अंतिम विदाई दी, जो अनेक मुगलों को गाजर-मूली की तरह काटते हुए आगे बढ़ने लगे। सत्रह-अट्ठारह वर्षीय वीर सूरमे के साथी शहीद हो गए, अस्त्र-शस्त्र खत्म हो गए तो फिर कटार निकाल कर हजारों मुगलों को मौत के घाट उतारा, बिलकुल खाली हाथ होने पर अंत में शहीदी को प्राप्त हो गए।

छोटे भाई साहिबजादा जुझार सिंघ, जिसकी आयु केवल चौदह वर्ष थी, उनका खून खौल उठा और पिता-गुरु से भाई की तरह युद्ध में जूझने एवं शहीदी प्राप्त करने के लिए प्रार्थना की और पिता ने सहर्ष उस वीर सपूत को मुगलों से लोहा लेने के लिए विदा किया। वीर बालक मुगलों पर टूट पड़ा, जिसकी शत्रुओं को भी उम्मीद नहीं थी। अंत में यह शूरवीर भी

**२१९०, सेक्टर-१२, पार्ट-१, सोनीपत (हरियाणा)-१३१००१*

शहीद हो गया।

२० दिसंबर १७०४ की ठिठुरती रात में जब श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने अनंदपुर साहिब का किला छोड़ा तो परिवार के सदस्य माता गुजरी जी और साहिबजादा जोरावर सिंघ (आयु सात वर्ष) तथा साहिबजादा फतेह सिंघ (आयु पांच वर्ष) पिता से बिछुड़ गए और रसोइये गंगू के साथ उसके घर चले गए। लालचवश उसने नमक-हरामी की तथा वह कृतघ्न बन गया और अत्याचारी प्रबंध की पुलिस के हवाले कर दिया। सुबह होते ही सूबेदार वजीर खां ने धर्म के रक्षक वीर सपूतों को अनेक प्रकार के लालच दिए और अपना धर्म छोड़ देने के लिए दबाव डाला, किन्तु वीर सपूत डगमगाये नहीं और धर्म पर कायम रहे। दादी-मां माता गुजरी जी ने भी उन्हें धर्म पर कुर्बान होने के लिए प्रोत्साहित किया। उन वीर बालकों ने स्पष्ट कहा कि जब तक हमारे शरीर में लहू की एक बूंद भी बाकी है, हम पाप और अधर्म के विरुद्ध लड़ते रहेंगे। काजी ने क्रोध में आकर बच्चों को तिल-तिल मारने के लिए दीवार में जिंदा चिने जाने की सजा सुना दी।

आओ! उस दृश्य पर जरा विचार करें जब दोनों वीर सपूत सरहिंद की दीवार में चिने जा रहे थे। बड़ा भाई और छोटा भाई साथ-साथ खड़े हैं। जब दीवार छोटे भाई के गले तक आ गई तो बड़े भाई की आंखों से अश्रुधारा बह रही थी। काजी मुल्लाओं ने समझा कि ये मौत से घबरा रहे हैं। दीवार का चिनना रोक दिया गया, किन्तु बड़े भाई ने वीरता से इन आंसुओं का कारण बताया, "छोटा भाई फतेह सिंघ मुझसे इस दुनिया में बाद में आया है, किन्तु धर्म की बलिवेदी पर मुझसे पहले कुर्बान हो रहा है, जबकि इससे पहले मेरा हक है।" साहिबजादा जोरावर सिंघ और साहिबजादा फतेह सिंघ ने निर्भय होकर जालिमों को इस प्रकार जवाब दिया :

जोरावर सिंघ जोर से बोला, फतेह सिंघ शोर से बोला,
रखो ईंटें, भरो गारे, चुनो दीवार हत्यारे!
निकलती सांस बोलेगी, हमारी लाश बोलेगी।
सरहिंद की यही दीवार बोलेगी, हजारों बार बोलेगी :
हमारे पंथ की जय हो, श्री गुरु ग्रंथ की जय हो!
हमारे देश की जय हो, पिता दशमेश की जय हो!

जालिमों ने सदा-सदा के लिए वीर सपूतों को धर्म की रक्षा के लिए शहीद कर दिया। वीर सपूतों की इस महान शहादत से जुल्म और अत्याचार के विरोधियों में नवीन चेतना का संचार हुआ। भारतीय जन-साधारण ने अथाह दुख महसूस किया किन्तु गर्व भी था। कविवर स. त्रिलोचन सिंघ के शब्दों में :

दशमेश पिता बाजां वाले के, वीर सुपुत्र चार।
जोड़ा-जोड़ा बन उन्होंने, जीत लिया संसार।
दो चमकौर शहीद हो गए, कर गये जग में ऊंचा नाम।
दो लाल सरहिंद के अंदर, गए नन्हीं जानें वार।
जब तक कायम रहेगी दुनिया, उनकी होगी पूजा अपार।
बहुत बुलंद हुआ है जग में, चारों वीरों का किरदार।

आओ! हम इन नन्हें-नन्हें महान वीर सपूतों को नमन करें, जिन्होंने देश, धर्म और जाति की खातिर अपना जीवन कुर्बान कर दिया। उनकी याद सदैव हमारे दिलों में रहेगी।

जब तक सूर्य, चांद, सितारे, धरती, आसमान रहेंगे उनका नाम सदैव अमर रहेगा।

कविता

वाह वाह गुरु गोबिंद सिंघ!

*-डॉ. कशमीर सिंघ 'नूर'**

पीरों का पीर, उच्च का पीर, महायोद्धा शूरवीर गुरु गोबिंद सिंघ!
धर्म की सच्ची तस्वीर, हिंद की तकदीर, महावीर गुरु गोबिंद सिंघ!
महातपस्वी, ज्ञान-सागर, युगपुरुष, शहंशाह फकीर गुरु गोबिंद सिंघ!
तोड़कर गुलामी की जंजीर, लिखी कौम की तकदीर गुरु गोबिंद सिंघ!
अहंकारियों के सीने दिए चीर, हाथ में लेकर शमशीर गुरु गोबिंद सिंघ!
मिटा दी जात-पात की लकीर, ऐसी बनाई तदबीर गुरु गोबिंद सिंघ!
सुनकर खलकत की पुकार, बन गए हक-सच की ललकार गुरु गोबिंद सिंघ!
पापियों का किया संहार, निताणों को किया प्यार गुरु गोबिंद सिंघ!
बेअंत रहमतों के भंडार, सृजित किया नया संसार गुरु गोबिंद सिंघ!
जो अड़े, उनको किया पार, शरण-पड़ों को दिया तार गुरु गोबिंद सिंघ!
डूबतों को लगाया पार, न डूबने दिया बीच मझधार गुरु गोबिंद सिंघ!
आपका ऊंचा और सच्चा दरबार, मेरी सच्ची सरकार गुरु गोबिंद सिंघ!
बैठाया निमाणों को अपने पास, परम पुरख का सच्चा दास गुरु गोबिंद सिंघ!
न होने दिया मनुष्यों को उदास, कायम रखी जीवन-आस गुरु गोबिंद सिंघ!
भाई घनईया जैसे उनके दास, मित्र-प्यारे गुरु खास गुरु गोबिंद सिंघ!
किया अज्ञानता का नाश, फैलाया ज्ञान का प्रकाश गुरु गोबिंद सिंघ!
क्यों होते हो सिंघ जी निराश, कठिन हालात में हैं धरवास गुरु गोबिंद सिंघ!
है अमृत में अकाल पुरख का वास, बताई यह बात खास गुरु गोबिंद सिंघ!
ऐसा खेल खेला, बना स्वयं गुरु स्वयं चेला, आनंद का मेला गुरु गोबिंद सिंघ!
ऐसा कौतुक दिखेला, चिड़ियों से बाज तुड़ेला, हौंसला बढ़ेला गुरु गोबिंद सिंघ!
सिक्खी-सिदक का यश फैला, दिया सिक्खी को रूप अलबेला गुरु गोबिंद सिंघ!
मर्द अगंमड़ा सुहेला, वाह-वाह नाम धरेला, बुलंदी की बेला गुरु गोबिंद सिंघ!
सवा लाख से एक लड़ेला, ऐसा सिखों को कौशल सिखेला गुरु गोबिंद सिंघ!
वाह-वाह आनंदपुर का मेला, खुश होते देख सिखों का रेला गुरु गोबिंद सिंघ!
खालसा-पंथ का बानी, मित्र-प्यारा, महाज्ञानी गुरु गोबिंद सिंघ!
सरबंस-दानी, दाता महात्यागी-महाबलिदानी गुरु गोबिंद सिंघ!
जालिमों का फंदा-फ़ानी, आपका हर सिंघ बहुत तूफानी गुरु गोबिंद सिंघ!
है आपकी अमानत हमारी उम्र-रवानी, यह जिंदगानी गुरु गोबिंद सिंघ!
हमको बख्शी सिखी, मेहरबानी! नाम जपें ज्ञानी-ध्यानी गुरु गोबिंद सिंघ!
आपका कोई नहीं है सानी, धन्य है, धन्य है आपकी कुर्बानी गुरु गोबिंद सिंघ!

**९२५, बी-एक्स, मोहल्ला संतोखपुरा, होशियारपुर रोड, जालंधर-१४४००४; मो. ०९८७२२-५४९९०*

कविता

छोटे साहिबजादों की कुर्बानी

-प्रो. महेन्द्र जोशी*

संदेशवाहक माही भेजा गया सरहिंद को।
समाचार बच्चों का लाने को।
समाचार माही जो लाया।
उसने सबका दिल दहलाया!
जितने भी लोग वहां थे।
सबकी आंखों में आंसू थे।
गुरु जी जाने शांत रहे कैसे थे!
शीशम वृक्ष के नीचे बैठे,
बलिदान बच्चों का रहे सुनते थे!
गंगू ने पैसों के लालच में विश्वासघात किया था।
बच्चों को, गुजरी माता को,
नवाब जानी खां के हाथ दिया था।
वजीर खां सरहिंद का सूबेदार।
करता था वो अत्याचार।
उसने बच्चों को और दादी को,
बुर्ज में बंद कर दिया सभी को।
वह बुर्ज आज भी वहां खड़ा है,
ठण्डा बुर्ज जिसका नाम पड़ा है।
दरबार में बच्चों को बुलवाया।
मुसलमान बन जाओ समझाया।
मीठा-मीठा बोल फुसलाया।
और लालच बहुत दिलाया।
नहीं माने तब उन्हें डराया।
कलमा यदि नहीं पढ़ोगे।
तलवार से काट दिये जाओगे।
रात को वापिस बुर्ज में आये।
और दादी के पास वे आये।
दरबार में हुआ जो बतलाया।
दादी ने उन्हें गले लगाया।
दादी ने उनको समझाया—
'बच्चो! सिर देना, धर्म नहीं देना!'
दादा जी का बलिदान सुनाया।
अगले दिन उनको फिर गया बुलाया,
नहीं माने, फिर उन्हें गया डराया।
सिर पर रख कर तलवार कहा—
'कलमा पढ़ लो नहीं तो यह तलवार यहां,
एक ही वार में कर देगी काम तमाम यहां!'
उत्तर था, 'डरा सकती नहीं तलवार हमें।
निज धर्म छोड़ना, नहीं स्वीकार हमें।'
उत्तर सुन कर सब दंग रह गये।
क्रोध से पागल वजीर खां गुर्राया।
काज़ी से फतवा पढ़वाया।
कत्ल कर दो इनको हुक्म सुनाया।
मुहम्मद शेर खां, नवाब मलेरकोटले का।
दरबार में वहां उपस्थित था।
युद्ध में उसका भाई,
गुरु गोबिंद सिंघ द्वारा मृत्यु को प्राप्त हुआ था।
वजीर खां ने कहा उससे—
'ले लो बदला इन बच्चों से।'
उत्तर था, 'यह अनुचित है।
इस्लाम में यह वर्जित है।'
उत्तर सुन कर वजीर खां अवाक रह गया।
मुसलमान यह कैसा है, क्या कह गया?
दीवान सुच्चा नंद प्रबंध का एक हिस्सा था।
बहुत नीच व्यक्ति वह था।
वजीर खां से कहा उसने,

*'भारत भाषा भूषण', ३०-ए, गोपाल नगर, श्री अमृतसर-१४३००१

सपोलों को छोड़ना मूर्खता है।
इनसे रहे खतरा ही खतरा है।"
वज़ीर खां ने हुक्म दिया जल्लादों को।
'दीवारों में जीवित चुनवा दो इनको।'
चारों ओर एक ईंट उठती जब दीवार।
था काज़ी कहता बच्चों से हर बार—
'कलमा पढ़ लो, जान बचा लो!
कलमा पढ़ लो, जान बचा लो!'
बच्चों का उत्तर था हर बार।
'जान अपनी हम देंगे वार।
धर्म न देंगे, दे देंगे जान!
धर्म न देंगे, दे देंगे जान!'
पांच साल के फतेह सिंघ थे।
सात साल के जोरावर सिंघ थे।
दीवार के वार गले तक आये।
गुरु के साहिबजादों ने फतह बुलाई—
'वहिगुरु जी का खालसा, वाहिगुरु जी की फतह ॥'
दीवार ऊंची होती गई,
दीवार ऊंची होती गई।
फिर शाशल बेग बाशल बेग थे आये,
कत्ल मुकद्दमा जिनके सिर था।
उन्हें कहा इनको कोह डालो।
अपना मुकद्दमा वापस करा लो।
आकर निज बचाव के लोभ में।
कोह डाले नन्हें लाल उन्होंने।
अंबर रोया धरती रोई।
क्रूरता इतनी देखी न गई।
बच्चों की दृढ़ता के अफसाने।
चलते रहेंगे कब तक न जाने!
जब तक यह संसार रहेगा।
बलिदान अमर यह याद रहेगा।

कविता

नरसिंघों को शत् शत् नमन

सिख होते हैं वीर साहसी सेवाभावी,
लड़े हैं सिख दूसरों के हित के लिये।
नहीं रही चिन्ता घर-परिवार की,
कर दिया न्यौछावर रक्षा के लिये सब कुछ
अमन व सुख-शांति के लिये।
पर कभी झुके नहीं, दबे नहीं
न जालिम शासन-प्रशासन से डरे, न सजा से त्रसित हुए
न ईमान छोड़ा, न सेवा छोड़ी
अपनाया त्याग, बलिदान, सेवा-धर्म,
धन्य हैं सिख भाई सारे जहां में!
सिख न होते जहां में तो कौन होता,
रक्षक निमाणों-निताणों का?
कैसे लोग जिन्दा रह पाते?
कैसे अपना धर्म बचा पाते?
विदेशी आक्रांताओं के अत्याचारों, दबावों से,
धर्म बदलने का दबाव था।
छलबल, अत्याचार से जबरदस्ती
मुसलमान बनाये जा रहे थे,
जजिया लिया जा रहा था।
ऐसे में गुरु-सिख ढाल-तलवार बनकर,
निमाणों-निताणों की रक्षा में खड़े रहे।
ऐसे नरसिंघों को शत्-शत् नमन।

-श्री सुरेन्द्र कुमार अग्रवाल, अग्रवाल न्यूज एजेन्सी, हटा, दमोह (म. प्र.)-४७०७७५

श्री हरिमंदर साहिब की रक्षा में प्राण न्यौछावर करने वाले

शहीद बाबा गुरबख्श सिंघ

*-डॉ. राजेंद्र सिंघ 'साहिल'**

श्री हरिमंदर साहिब सिखों का केंद्रीय आध्यात्मिक स्थल है, इसीलिए यह सिखों की श्रद्धा, आन-बान-शान और स्वाभिमान का भी प्रतीक है। १८वीं शताब्दी में सिखों का सारा संघर्ष दलित-शोषित मानवता की रक्षा के लिए था। सो, मानवता के शत्रुओं को लगता था कि सिख अपनी सारी शक्ति 'श्री हरिमंदर साहिब' और 'अमृत सरोवर' से प्राप्त करते हैं। वे समझते थे कि 'अमृत सरोवर' का जल छक कर ही सिख इतने बहादुर, दिलेर, दृढ़-निश्चय वाले बन जाते हैं।

इसलिए मानवता के शत्रुओं के मन में यह ख्याल घर कर गया कि यदि इस स्थान को ही नष्ट कर दिया जाये तो सिखों की मानसिक शक्ति खत्म हो जायेगी और उन्हें आसानी से समाप्त किया जा सकेगा। इस उद्देश्य को सामने रख कर तत्कालीन आक्रमणकारी मुगलों, तुर्कों, अफगानों आदि ने कई बार श्री हरिमंदर साहिब एवं अमृत सरोवर को अपवित्र करने और ढाह-ढेरी (नष्ट) करने की कोशिशें कीं, परन्तु हर बार गुरु के लाडले सिंघों ने अपने गौरव के प्रतीक इस स्थान को पुन: जीता और सजा-संवार कर पुन: निर्मित कर लिया।

सबसे पहले जकरिया खान सूबेदार लाहौर ने दीवाली के अवसर पर श्री हरिमंदर साहिब में एकत्र होने वाले सिखों को एक साथ घेर कर खत्म कर देने की योजना बनाई। परंतु भाई मनी सिंघ जी की बुद्धिमता के कारण जकरिया खान का यह षड़यंत्र बुरी तरह विफल हो गया। फलस्वरूप सन् १७३० ई में भाई मनी सिंघ जी को बंद-बंद काट कर शहीद कर दिया गया।

इसके बाद सन् १७४५ ई में जंडियाले के फौजदार मस्से रंघड़ ने श्री हरिमंदर साहिब में जाकर पलंग बिछाकर शराब पी और कंजरियां (विश्याएं) नचा कर इस पवित्र-स्थान की घोर बेअदबी की। तब भाई सुक्खा सिंघ और भाई महिताब सिंघ ने बीकानेर से आकर सरेआम मस्से का सिर काटा और बरछे पर टांग कर वापस ले गये। इस तरह दुष्ट मस्से रंघड़ को उसकी करनी का फल दिया।

सन् १७५२ ई में लाहौर के दीवान लखपत राय ने श्री हरिमंदर साहिब पर कब्जा करके अमृत सरोवर को मिट्टी से भरवा दिया, परंतु दल खालसा ने शीघ्र ही अमृतसर शहर को पुन: प्राप्त करके अमृत सरोवर की कार-सेवा करवा ली। १७५२-५३ ई में ही मीर मन्नू ने सरोवर को मिट्टी से भरवा दिया परंतु सिखों ने दीवाली आते-आते फिर से सरोवर की सफाई कर ली।

इसी तरह सन् १७५७ ई में अहमदशाह अब्दाली का भारत में से लूटा हुआ माल सिंघों द्वारा छीन लेने पर अब्दाली का सिपहसालार जहान खान फौज लेकर अमृतसर पर आ हमलावर हुआ। श्री हरिमंदर साहिब की रक्षा करते हुए बाबा दीप सिंघ जी शहीद हो गये। जहान खान ने शहर को जीत कर अमृत

***१/३३८, 'स्वप्नलोक', दशमेश नगर, मंडी मुल्लांपुर दाखा (लुधियाना)।*

सरोवर को मिट्टी से भरवा दिया। परंतु सिख भी कहां चैन से बैठने वाले थे! गुरु के लाडलों ने उसी साल अमृतसर शहर को फिर से जीत कर सरोवर की कार-सेवा कर ली।

इस प्रकार श्री हरिमंदर साहिब की रक्षा के लिए अपनी जानें वारने वाले सिखों की फेहरिस्त बहुत लंबी है। शहीदों की इसी परम्परा में एक नाम शहीद बाबा गुरबख्श सिंघ जी का भी है। अहमदशाह अब्दाली के सन् १७६४ ई में हुए हमले के दौरान बाबा गुरबख्श सिंघ जी ने अपने सिर्फ तीस साथियों के साथ अब्दाली की छत्तीस हजार फौज का मुकाबला किया और अनगिनत बैरियों को मौत के घाट उतारते हुए अपने साथियों के साथ शहीदी प्राप्त की।

जन्म एवं जीवन

बाबा गुरबख्श सिंघ जी अमृतसर जिले के खेमकरण नगर के निकट स्थित एक गांव 'लील' के रहने वाले थे। आपका जन्म संभवत: १७०५-१० ई के आस-पास यहीं हुआ था। आपने युवा होकर जिन पांच प्यारों से अमृत छका उनमें भाई मनी सिंघ जी भी शामिल थे। अमृत छका और पूर्ण 'सिंघ' सज गये। आप पक्के रहतवान और सूरमा थे। पहर भर रात रहते उठते, गुरबाणी पढ़ते और सिदकपूर्वक सिखी के सिद्धांतों का पालन करते। बाबा जी स्वच्छ सफेद रंग का 'बाणा' (चोला एवं कछहिरा) धारण करते। सिख आपको सम्मानपूर्वक 'निहंग जी' कहकर पुकारते। आप जहां कहीं भी युद्ध होने की खबर सुनते, नगाड़े बजाते हुए वहां पहुंच जाते। बाद में आपने श्री अकाल तख्त साहिब के जत्थेदार के रूप में भी पंथ की सेवा की।

अब्दाली का हमला

नवंबर-दिसंबर सन् १७६४ ई में अहमद शाह अब्दाली ने भारत पर सातवां हमला किया। इस समय ज्यादातर सिख जत्थेदार पंजाब से बाहर अलग-अलग मुहिमों पर गये हुए थे। सरदार जस्सा सिंघ आहलूवालिया दिल्ली में थे। केवल सरदार चढ़त सिंघ सियालकोट में थे। जब उन्हें अब्दाली के लाहौर पहुंचने की खबर मिली तो उन्होंने तुरंत पहुंच कर अब्दाली के खेमों पर जबरदस्त हल्ला बोल दिया। इस अचानक हमले ने अब्दाली के लश्कर को भारी नुकसान पहुंचाया। एक सफल हमले के बाद सरदार चढ़त सिंघ अगले हमले की तैयारी करने के लिए अपने जत्थे के साथ जंगलों में लुप्त हो गये।

अब्दाली का अमृतसर पर आक्रमण

इस अचानक हमले से भन्नाया अब्दाली श्री अमृतसर की ओर बढ़ा। उसने आते ही श्री हरिमंदर साहिब को घेर लिया। इस समय श्री हरिमंदर साहिब में बाबा गुरबख्श सिंघ जी समेत सिर्फ तीस सिख थे। हमले की खबर सुनते ही बाबा जी ने श्री हरिमंदर साहिब की रक्षा की तैयारी शुरू कर दी। सभी सिखों ने अस्त्र-शस्त्र सजा लिये। अरदासा सोधा, श्री दरबार साहिब में माथा टेका और जंग करने के लिए तैयार-बर-तैयार हो गये।

बाबा जी की शहादत

इतने में अब्दाली की फौज श्री हरिमंदर साहिब की परिक्रमा में घुस आई। बाबा गुरबख्श सिंघ और उनके साथी सिखों ने दुश्मन का डट कर मुकाबला शुरू कर दिया। सिख हमलावरों को दर्शनी ड्योढ़ी पर पांव तक नहीं रखने दे रहे थे। जो आगे बढ़ता वो श्री साहिब की भेंट चढ़ जाता।

दुश्मन के पास तीर और बंदूक जैसे दूर

(शेष पृष्ठ ३६ पर)

श्री गुरु ग्रंथ साहिब : एक सांझी विरासत

-कैप्टन मनमीत कौर*

श्री गुरु नानक देव जी द्वारा स्थापित किया गया सिख धर्म, जिसके स्वरूप को शेष नौ गुरु साहिबान ने संवारा, निखारा एवं अद्वितीय स्वरूप प्रदान किया, एक ऐसा धर्म है जो अज्ञानता एवं अन्धकार में भटकते व्यक्तियों को शान्ति प्रदान करने में सक्षम है। समूह मानवता के सर्वपक्षीय कल्याण हेतु पंचम गुरु श्री गुरु अरजन देव जी ने विश्व की जनता को श्री गुरु ग्रंथ साहिब रूपी अलाही वरदान प्रदान किया। १६०४ ई में इसकी सम्पादना करके श्री हरिमंदर साहिब, श्री अमृतसर में बाबा बुड्ढा जी को मुख्य ग्रंथी नियुक्त करके इस पावन ग्रंथ का प्रकाश करवाया था जो कि 'प्रथम प्रकाश पर्व' के रूप में जाना जाता है। तत्पश्चात दसवें पातशाह श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने नौंवें पातशाह श्री गुरु तेग बहादर साहिब की बाणी को शामिल कर श्री हजूर साहिब, नांदेड़ में देहधारी गुरु-परम्परा को समाप्त कर १७०८ ई में श्री गुरु ग्रंथ साहिब को दस गुरु साहिबान की सम्पूर्ण ज्योति के रूप में प्रतिष्ठित किया। तथापि श्री गुरु ग्रंथ साहिब किसी एक धर्म, सम्प्रदाय तथा देश से सम्बंधित न होकर सम्पूर्ण मानव-जाति को आदर्श जीवन-पद्धति एवं सत्य का मार्ग प्रशस्त करने वाला आध्यात्मिक, सामाजिक एवं भावनात्मक एकता का प्रतीक है। इसके संग्रह व संकलन में सांझी प्रवृत्ति को अपनाया गया है। इसमें ६ सिख गुरु साहिबान के अलावा विभिन्न क्षेत्रों, धर्मों, वर्णों, भाषाओं, सम्प्रदायों से सम्बंधित परमात्मा की स्तुति में मग्न १५ भक्त साहिबान, ११ भट्ट साहिबान तथा गुरु-घर के कुछ निकट प्रेमियों की बाणियां भी विद्यमान हैं जो कि ३१ रागों में बद्ध हैं।

धार्मिक सहनशीलता और सांझेपन का पूरा सम्मान करते हुए गुरु जी का उपदेश एक सम्पूर्ण मनुष्य तैयार करना था तथा उसके लिए एक सर्वपक्षीय सिद्धांत व नियमों से पंथ को चलाने की आवश्यकता थी। मानवीय एकता में विश्वास ही गुरबाणी की एक प्रमुख विशेषता है। यद्यपि गुरबाणी में मनुष्य के दो रूप माने गए हैं—गुरमुख व मनमुख। ये वर्ग स्वभाव के आधार पर माने गए हैं, परन्तु मनुष्य के जन्म, कर्म तथा धर्म के कारण मनुष्ता में विभाजन नहीं किया गया। गुरबाणी में जात-पात, वर्ण-भेद, ऊंच-नीच का खंडन करके मनुष्य को भाईचारे की भावना की शिक्षा दी गयी है :

अवलि अलह नूरु उपाइआ कुदरति के सभ बंदे ॥
एक नूर ते सभु जगु उपजिआ कउन भले को मंदे ॥ *(पन्ना १३४९)*

माया के प्रभाव से मुक्त होने के लिए सहज योग का एक मध्यम मार्ग दर्शाया गया है। माया से दूर भागने का प्रयास करने के स्थान पर माया में विचरण करते हुए निर्लिप्त रहने का सिद्धांत प्रस्तुत किया गया है।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में मुक्ति को इस

*Head of Philosophy Deptt., Navyug Girls Post -Graduate College, Rajinder Nagar, Lucknow.

जीवन के बाद का अनुभव नहीं बल्कि इस जीवन की प्राप्ति माना गया है :

जंमणु मरणु न तिन्ह कउ जो हरि लड़ि लागे ॥
जीवन से परवाणु होए हरि कीरतनि जागे ॥
(पन्ना ३२२)

गुरबाणी का उद्देश्य मनुष्य को हर पक्ष से सम्पूर्ण बनाना है। मनुष्य को संसार को त्याग कर वन-गमन करने की आवश्यकता नहीं है। वह गृहस्थ जीवन का निर्वाह करते हुए, सांसारिक कार्यों को करते हुए भी नाम-सुमिरन कर सकता है तथा मुक्ति प्राप्त कर सकता है:

नानक सतिगुरि भेटिऐ पूरी होवै जुगति ॥
हसंदिआ खेलंदिआ पैनंदिआ खावंदिआ विचे होवै मुकति ॥ *(पन्ना ५२२)*

विज्ञान के पक्ष से भी श्री गुरु ग्रंथ साहिब का ज्ञान प्रामाणिक है। यह प्रथम पावन ग्रंथ है जिसमें सृष्टि की विशालता को अनन्त बताया गया है। विज्ञान की तरक्की से गुरबाणी के कथनों की सच्चाई सिद्ध हो रही है :

पाताला पाताल लख आगासा आगास ॥
(पन्ना ५)

श्री गुरु ग्रंथ साहिब की विचारधारा एक क्रांतिकारी विचारधारा है जो समाज से ऊंच-नीच तथा बेइंसाफी दूर करके एक सामाजिक भाईचारा स्थापित करने का मार्ग दिखाती है। इसमें वर्ण-भेद, छुआ-छूत आदि का खण्डन किया गया है। यह सर्वगुण-सम्पन्न, हर पक्ष से सम्पूर्ण आलौकिक तथा सर्व-समर्थ है। यह सिख धर्म का आधार स्वरूप, खालसा पंथ की संचालन-शक्ति व सम्पूर्ण जीवन-सिद्धांत है।

राजनैतिक क्षेत्र में भी गुरबाणी मनुष्य की सही मायने में अगुवाई करती है। इससे स्पष्ट है कि श्री गुरु ग्रंथ साहिब का दर्शन एक मुकम्मल विचारधारा है। इसमें आम मनुष्य की भलाई को अत्यन्त महत्व दिया गया है। इसमें मानवता को धर्म तथा वर्ण के नाम पर विभाजित करने की आज्ञा नहीं है। इसमें समस्त संसार तथा समूची मानवता के भले की कामना की गयी है :

खत्री ब्राहमण सूद वैस उपदेसु चहु वरना कउ साझा ॥ *(पन्ना ७४७)*

आज आवश्यकता है कि गुरमति की विचारधारा को ग्रहण किया जाए तथा आवश्यकता है अपने अनुभव में लाकर अपना जीवन इसके सिद्धांतों के अनुसार ढालने की। हिन्दुस्तान में आज तक रचे गए धर्म-ग्रंथों में यह पहला तथा एक मात्र ग्रंथ है जो विशेष रूप से उत्तरी हिन्दुस्तान के जन-साधारण की समझी व बोली जाने वाली भाषा में रचा गया।

मनुष्य का इस जीवन में आने का वास्तविक उद्देश्य क्या है? उसका सबसे बड़ा उद्देश्य प्रभु के साथ अभेद होना है। परमात्मा की सम्पूर्ण सृष्टि में मनुष्य-योनि ही एकमात्र ऐसी योनि है जिसे कर्म-योनि कहा जाता है। सही-गलत की समझ, उच्च व निम्न कर्म का ज्ञान, अपने आप को सुधार कर विकास करने की प्रवृत्ति, नैतिकता के पालन की समझ व परमात्मा की भक्ति करके उसमें लीन हो जाने की सामर्थ्य केवल मनुष्य-योनि में ही मिल सकती है। यह एक ऐसी शक्ति है जिसके द्वारा मनुष्य नर से नारायण तथा इंसान से भगवान के गुणों का धारक बन सकता है।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब की सबसे बड़ी विशेषता व महानता यह है कि यह एक ऐसा ग्रंथ है जो एक तरफ आध्यात्मिक जीवन के बारे

में मार्गदर्शन करता है तथा दूसरी ओर सामाजिक जीवन को संतुलित और सुयोग्य बनाने में पूर्ण सहयोग देता है।

सदाचारी होना जीवन का एक बड़ा कर्म है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी की बाणी मनुष्य को अपने मूल उद्देश्य के साथ-साथ उत्तम जीवन की राह सिखाती है। मानवता को इसकी सबसे बड़ी देन यह है कि इसमें ऐसे सिद्धांतों की सृजना की गयी है जो व्यवहारिक रूप से मानव जीवन में क्रियाशील होकर आदर्श मनुष्य की रचना करने में समर्थ हैं।

धर्म मनुष्य के जीवन का एक महत्वपूर्ण अंग है तथा इसको समाप्त नहीं किया जा सकता, बल्कि इसको प्रफुल्लित करते हुए सही दिशा प्रदान की जाए तो सामाजिक कीमतों में बढ़ोत्तरी की जा सकती है।

आज अलगाव का दुख, असुरक्षा की भावना व मौत का डर हर स्थान पर व्याप्त है। जीवन के मूल्य बदल गए हैं। प्यार, सच्चाई, एकता व भाईचारे के स्थान पर वैर-विरोध, भ्रष्टाचार तथा नफरत का बोलबाला है।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में अध्यात्म मार्ग की व्याख्या वैज्ञानिक ढंग से की गयी है। इस विचार पर बल दिया गया है कि अध्यात्म का आधार सदाचार है। जीवन को सफल बनाने के लिए सच्चाई, विनम्रता, क्षमा, सहनशीलता, संतोष, सेवा, परोपकार की भावना आदि गुणों की आवश्यकता है। इन गुणों को धारण करने के अलावा झूठ बोलना, निन्दा व चुगली करना, छल-कपट एवं ईर्ष्या-द्वेष से छुटकारा पाने की शिक्षा दी गयी है।

शांत रस, वीर रस आदि रसों, श्लोक, छंद, वार, सवैये, पउड़ी आदि लोक-काव्य रूप, अलंकार-युक्त रचनाओं ने इस पावन ग्रंथ को साहित्यिक दृष्टि से भी सर्वोत्तम बना दिया है।

आज इस वैज्ञानिक युग में भी मनुष्य खोखले भ्रमों में पड़ कर अपना समय व धन दोनों ही नष्ट कर रहा है तथा परमात्मा से दूर होता जा रहा है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में यह समझाया गया है कि इन भ्रमों में पड़ने के स्थान पर मनुष्य को अपने अंदर से लोभ, झूठ, निंदा आदि विकारों को दूर करने का प्रयास करना चाहिए जो उसके हृदय को हर समय मैला व अपवित्र करते हैं तथा उसके आचरण को भ्रष्ट करते हैं :

मन का सूतकु लोभु है जिहवा सूतकु कूड़ु ॥
अखी सूतकु वेखणा पर त्रिअ पर धन रूपु ॥
कंनी सूतकु कंनि पै लाइतबारी खाहि ॥
नानक हंसा आदमी बधे जम पुरि जाहि ॥
(पन्ना ४७२)

इस प्रकार से जनमानस को शांति एवं गौरव प्रदान करने हेतु १४३० पन्नों का यह एक वृहद ग्रंथ है। इसका संकलन भले ही आज से ४०० वर्ष पूर्व हुआ तथापि अतीत, वर्तमान एवं भविष्य की समस्त ज्वलन्त समस्याओं का सुचारू रूप से समाधान एवं विश्व-संस्कृति का आदर्श स्वरूप इसमें पूर्ण रूप से दृष्टिगोचर होता है। इसलिए आज आवश्यकता है इसका अध्ययन करने की, विचार करने की तथा इसके उपदेशों को अपने जीवन में लागू करने की, जिससे एक आदर्श समाज का निर्माण हो सके। इसमें जिन मानवीय मूल्यों की अभिव्यंजना हुई है वे सर्वकालीन, सार्वभौमिक एवं युगों-युगों तक समस्त मानवता का मार्ग प्रशस्त करने वाले हैं।

सभ महि जोति जोति है सोइ

*-डॉ. मनजीत कौर**

सर्वधर्म सम्भाव के उद्देश्य से विरचित विश्व इतिहास का विलक्षण ग्रंथ श्री गुरु ग्रंथ साहिब है, जिसकी पावन संपादना का पुनीत कार्य पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी ने १६०४ ई. में किया तथा सर्वसांझी मानवता के लिए निर्मित धार्मिक स्थल श्री हरिमंदर साहिब में जिसका पहला पावन प्रकाश हुआ। इस ग्रंथ की बाणी किसी धर्म या वर्ग विशेष के लिए नहीं है अपितु सर्वसांझे आध्यात्मिक साहित्य का अथाह खजाना है।

मनीषियों के चिन्तनानुसार यह बाणी सदियों से सर्वसांझी विचारधारा, धर्मों की एकता को ही पक्का नहीं करती अपितु ईश्वरीय एकता और इंसानियत के महान विश्वास को दृढ़ करके सबको प्यार का, सेवा, संयम आदि का आध्यात्मिक पैगाम और संदेश देती है।

अत: विघटन एवं असामंजस्य को समाप्त करने के उद्देश्य से गुरु साहिबान तथा संतों-भक्तों ने जो उपदेश दिए वे अनुकरणीय हैं। जान मैलकाम अपनी प्रसिद्ध पुस्तक "ए स्कैच आफ दी सिख्ज़" में संकेत करते हैं—विश्वासों में समता प्रतिष्ठापित करने की उदात्त एवं परोपकारी भावना से प्रेरित होकर श्री गुरु नानक देव जी ने हिन्दुओं तथा मुसलमानों को अपने सिद्धांतों के झण्डे के नीचे इकट्ठे करने का सफल प्रयत्न किया। इस प्रयत्न में उन्होंने हिन्दुओं और मुसलमानों को अपने-अपने विश्वासों एवं प्रथाओं के उन अंशों को छोड़ने के लिए अनुप्रेरित किया जिन्हें वे उनके पूजनीय ईश्वर के प्रति अशोभनीय समझते थे।

वस्तुत: श्री गुरु ग्रंथ साहिब की बाणी में किसी धर्म या धर्म-ग्रंथ की आलोचना नहीं की गई अपितु उनके अनुयायियों में प्रविष्ट हुई कुरीतियों तथा स्वार्थों, धर्मावलम्बियों के व्यावहारिक रूप में निहित स्वार्थ, दम्भ पाखंड आदि की आलोचना की गई है, जो निज स्वार्थ पूर्ति हेतु धर्मान्धता उत्पन्न कर, मानव मानव के बीच ईर्ष्या-वैमनस्य जैसे विष के बीज बोकर अपना-अपना उल्लू सीधा कर रहे थे। इस तरह के कपटपूर्ण अंधविश्वासों से जन-जन को उभारने हेतु श्री गुरु नानक देव जी ने कितने उपयोगी शबद कहे हैं :

पड़ि पुसतक संधिआ बादं ॥
सिल पूजसि बगुल समाधं ॥
मुखि झूठ बिभूखण सारं ॥
त्रैपाल तिहाल बिचारं ॥
गलि माला तिलकु लिलाटं ॥
दुइ धोती बसत्र कपाटं ॥
जे जाणसि ब्रहमं करमं ॥
सभि फोकट निसचउ करमं ॥ (पन्ना ४७०)

अत: श्री गुरु नानक देव जी शुभ कर्मों के बिना सब कुछ व्यर्थ मानते हैं। जब गुरदेव से प्रश्न किया गया कि आपकी दृष्टि में हिन्दू बड़ा है या मुसलमान, तो कितना सार्थक जवाब था कि खुदा की नज़र में वही प्रवान है जिसके अमल (कर्म) श्रेष्ठ हैं! इस संदर्भ में हुए

**२/१०४, जवाहर नगर, जयपुर (राजस्थान)-३०२००४ मो: ०१४१-२६५०३७०*

वार्तालाप का जिक्र भाई गुरदास जी ने अपनी पहली वार में किया है :

पुछनि गल ईमान दी काजी मुलां इकठे होई।
वडा सांग वरताइआ लखि न सकै कुदरति कोई।
पूछनि फोलि किताब नो हिंदू वडा कि मुसलमानोई?
बाबा आखे हाजीआ सुभि अमला बाझहु दोनो रोई।

सर्वधर्म समन्वय की पुष्टि श्री गुरु ग्रंथ साहिब की बाणी में सर्वत्र होती है। कतिपय उदाहरणों से इस सत्य से साक्षात्कार करने का प्रयास करें। श्री गुरु नानक देव जी की धनासरी राग में उच्चारित बाणी सर्वधर्म समन्वय की सुंदर तथा विलक्षण मिसाल है:

गगन मै थालु रवि चंदु दीपक बने तारिका मंडल जनक मोती ॥
धूपु मलआनलो पवणु चवरो करे सगल बनराइ फूलंत जोती ॥१॥
कैसी आरती होइ ॥
भव खंडना तेरी आरती ॥
अनहता सबद वाजंत भेरी ॥१॥रहाउ॥
सहस तव नैन नन नैन हहि तोहि कउ
सहस मूरति नना एक तुोही ॥
सहस पद बिमल नन एक पद गंध बिनु
सहस तव गंध इव चलत मोही ॥
सभ महि जोति जोति है सोइ ॥
तिस दै चानणि सभ महि चानणु होइ ॥
(पन्ना १३)

इस शबद में परमात्मा के निर्गुण एवं सगुण स्वरूप का सुंदर समन्वय तथा उसी के नूर से सुसज्जित सारी सृष्टि तथा समूची प्रकृति को उस अकाल पुरख की आरती करते हुए दिखा कर इतना सुंदर रूपक बांधा है कि अनोखा दृश्य साकार हो उठता है। किस प्रकार सारा आकाश मानो एक थाल है! सूरज और चंद्रमा उस थाल में दो दीपक हैं। तारों का समूह मानो उस थाल में रखे हुए मोती हैं। मलय पर्वत की ओर से आ रही सुरभित पवन मानो उस थाल में धूप में जल कर सारे वातावरण को सुगंधित कर रही है, हवा मानो चवर कर रही है। समूची वनस्पति उस अनंत परमात्मा की भव्य आरती हेतु सुंदर फूल अर्पित कर रही है।

हे जीवों के जन्म-मरण नाश करने वाले! कुदरत में तेरी कैसी सुंदर आरती हो रही है। समस्त प्राणियों में चल रही जीवन रौं (प्राणवायु अर्थात् हृदय की धड़कनें) मानो तेरी आरती में नगाड़े बज रहे हैं।

समस्त जीवों में व्यापक होने के कारण हजारों तेरी आंखें हैं, पर निराकार स्वरूप में तेरी एक भी आंख नहीं है। हजारों तेरी आकृतियां हैं पर तेरी कोई भी आकृति नहीं है। हजारों तेरे नाक हैं पर निराकार रूप में तू नाक से रहित है। तेरे ऐसे अनुपम कौतुक हैरान करने वाले हैं। सारे प्राणियों में एक उसी परमात्मा की ज्योति जग रही है। उसी की ज्योति के प्रकाश से समस्त जीवों में प्रकाश अर्थात् सूझबूझ है।

इस पावन ग्रंथ की बाणी के निर्मल उपदेश समूची मानवता के कल्याण के लिए हैं। अतः मानव-मात्र के उपकार हित रचित बाणी ईर्ष्या, द्वेष, वैमनस्य की आग में जल रही मानवता हेतु श्री गुरु अमरदास जी उस परम पिता परमेश्वर के चरणों में अरदास करते हैं :

जगतु जलंदा रखि लै आपणी किरपा धारि ॥
जितु दुआरै उबरै तितै लैहु उबारि ॥ (पन्ना ८५३)

सभी धर्मों को अपनी-अपनी जगह उपयुक्त मानते हुए गुरदेव ईश्वर के समक्ष विनती करते हैं कि हे वाहिगुरु! अपनी दया-दृष्टि से किसी भी द्वार (धर्म) के माध्यम से ईर्ष्या, द्वेष की

अग्नि से बचा ले। समन्वय तथा विश्व-बन्धुत्व की ऐसी मिसाल और कहां?

इसी भाव को दृढ़ करती पंचम पातशाह की बाणी :

ना को बैरी नही बिगाना सगल संगि हम कउ बनि आई ॥ (पन्ना १२९९)

यही नहीं सबको एक पिता की संतान मानते हुए कथन करते हैं :

एकु पिता एकस के हम बारिक तू मेरा गुर हाई ॥ (पन्ना ६११)

उस परवरदिगार के आगे सब प्राणियों के लिए अरदास करते हुए आपके पावन वचन हैं:

सभे जीअ समालि अपणी मिहर करु ॥
अंनु पाणी मुचु उपाइ दुख दालदु भंनि तरु ॥ (पन्ना १२५१)

प्रत्येक शरीर में उसी परमात्मा का निवास है। इस सांझीवालता का पावन उपदेश देते हुए श्री गुरु अरजन देव जी का फरमान है :

तूं साझा साहिबु बापु हमारा ॥
नउ निधि तेरै अखुट भंडारा ॥
जिसु तूं देहि सु त्रिपति अघावै सोई भगतु तुमारा जीउ ॥
सभु को आसै तेरी बैठा ॥
घट घट अंतरि तूंहै वुठा ॥
सभे साझीवाल सदाइनि तूं किसै न दिसहि बाहरा जीउ ॥ (पन्ना ९७)

यही नहीं गुरु पातशाह समूची मानवता को एक रूप देखने का आदेश देते हुए स्पष्ट करते हैं कि परमात्मा की सत्ता रूप धागे में सभी मनुष्य रूपी मोती पिरोए हुए हैं।

एकै सूति परोए मणीए ॥
गाठी भिनि भिनि भिनि भिनि तणीए ॥
फिरती माला बहु बिधि भाइ ॥
खिंचिआ सूतु न आई थाइ ॥ (पन्ना ८८६)

अत: पावन ग्रंथ की बाणी हमें यह भी दृढ़ करवाती है कि जाति या मजहब के आधार पर कोई मनुष्य दूसरे से अलग नहीं हो सकता। इसी भाव को स्पष्ट करती पावन गुरबाणी का निर्मल फरमान है :

ना हम हिंदू न मुसलमान ॥
अलह राम के पिंडु परान ॥ (पन्ना ११३६)

इसलिए मीठा बोलना तथा विनम्रता से रहना सभी गुणों का सार है। 'आसा की वार' में श्री गुरु नानक देव जी ने यही स्पष्ट किया है :

मिठतु नीवी नानका गुण चंगिआईआ ततु ॥ (पन्ना ४७०)

भक्त कबीर जी की बाणी मानवतावादी दृष्टिकोण तथा समन्यभाव की पुष्टि करती है। प्रभाती राग में उच्चारित उनका पावन शबद बहुत ही सुंदर मिसाल है कि जब समस्त रचना उसी कुदरत की है तो आप किसे बुरा और किसे भला कहोगे? यथा:

अवलि अलह नूरु उपाइआ कुदरति के सभ बंदे ॥
एक नूर ते सभु जगु उपजिआ कउन भले को मंदे ॥
लोगा भरमि न भूलहु भाई ॥
खालिकु खलक महि खालिकु पूरि रहिओ स्रब ठांई ॥
माटी एक अनेक भांति करि साजी साजनहारै ॥
ना कछु पोच माटी के भांडे ना कछु पोच कुंभारै ॥
सभ महि सचा एको सोई तिस का कीआ सभु कछु होई ॥
हुकमु पछानै सु एको जानै बंदा कहीऐ सोई ॥
अलहु अलखु न जाई लखिआ गुरि गुडु दीना मीठा ॥

कहित कबीर मेरी संका नासी सरब निरंजनु डीठा ॥ (पन्ना १३४९)

यही नहीं जाति-अभिमानियों को भक्त कबीर जी ने उनकी निचली आत्मिक अवस्था बताते हुए खरी-खरी भी सुनाई है। इसी तरह के प्रश्न करते भक्त कबीर जी कह उठते हैं :

गरभ वास महि कुलु नही जाती ॥
ब्रहम बिंदु ते सभ उतपाती ॥
कहु रे पंडित बामन कब के होए ॥
बामन कहि कहि जनमु मत खोए ॥
जौ तूं ब्राहमणु ब्रहमणी जाइआ ॥
तउ आन बाट काहे नही आइआ ॥
तुम कत ब्राहमण हम कत सूद ॥
हम कत लोहू तुम कत दूध ॥
कहु कबीर जो ब्रहमु बीचारै ॥
सो ब्राहमणु कहीअतु है हमारे ॥ (पन्ना ३२४)

तभी तो भक्त कबीर जी पुकार-पुकार कर समूची मानवता को जगाते हैं। उनका वचन है :

हिंदू तुरक दुहूं महि एकै कहै कबीर पुकारी ॥ (पन्ना ४८३)

तभी तो विश्व-बंधुत्व का संदेश देने वाली पावन ग्रंथ की बाणी किसी का भी बुरा न चितवने का सुंदर उपदेश देती है :

पर का बुरा न राखहु चीत ॥
तुम कउ दुखु नही भाई मीत ॥ (पन्ना ३८६)

बाबा फरीद जी तो बुरे का भी भला करने का निर्मल उपदेश देते हैं :

फरीदा बुरे दा भला करि गुसा मनि न हढाइ ॥
देही रोगु न लगई पलै सभु किछु पाइ ॥ (पन्ना १३८१)

साथ ही समस्त उन कर्मों को त्यागने का उपदेश देते हैं कि जिनमें सत्यता तथा यथार्थ नहीं ताकि खुदा की दरगाह में तुम्हें शमिन्दा न होना पड़े :

फरीदा जिन्ही कंमी नाहि गुण ते कंमड़े विसारि ॥
मतु सरमिंदा थीवही सांई दै दरबारि ॥ (पन्ना १३८१)

भक्त पीपा जी जीवात्मा एवं परमात्मा के संबंध को आध्यात्मिक अर्थ में समझाते हुए समन्वय का बहुत सुंदर उदाहरण प्रस्तुत करते हैं, यथा :

जो ब्रहमंडे सोई पिंडे जो खोजै सो पावै ॥
पीपा प्रणवै परम ततु है सतिगुरु होइ लखावै ॥ (पन्ना ६९५)

अर्थात् जो सृष्टि का सृजनकर्ता है, सारे ब्रह्मांड में व्यापक है, वही मनुष्य के शरीर में भी है। अगर पूर्ण गुरु मिल जाए तो अंदर बसता परमात्मा प्रत्यक्ष दिखाई देने लगता है।

गुरबाणी किसी जाति-भेद को नहीं मानती, क्योंकि आगे जाति और जोर नहीं चलता। उस मालिक की दरगाह में तो मनुष्य के नेक कर्म ही उसे आदर दिलवाएंगे, यथा गुरबाणी का प्रमाण है :

अगै जाति न जोरु है अगै जीउ नवे ॥
जिन की लेखै पति पवै चंगे सेई केइ ॥ (पन्ना ४६९)

गुरबाणी का पावन संदेश है कि इस जगत में नीची जाति के कहलवाने वाले भी उस परमेश्वर का नाम जप कर उच्चावस्था को प्राप्त हो जाते हैं :

नीच जाति हरि जपतिआ उतम पदवी पाइ ॥ (पन्ना ७३३)

सर्वधर्म-समन्वय विश्व-बन्धुत्व तथा एक अकाल पुरख की पूजा पर बल देती दशम पातशाह की बाणी आत्मा-परमात्मा का ही अभिन्न अंग है, जैसे अग्नि और चिंगारी, धूल तथा धूल का कण, नदी व नदी की लहर

अभिन्न हैं। यह पावन उपदेश गुरु पातशाह 'अकाल उसतत' में देते हुए सुंदर फरमान करते हैं :

जैसे एक नाद ते तरंग कोट उपजत हैं
पान के तरंग सबै पान ही कहाहिंगे ॥
तैसे बिस्व रूप ते अभूत भूत प्रगट हुइ
ताही ते उपज सबै ताही मै समाहिंगे ॥१७॥१८७॥

समस्त में उसी का पावन प्रकाश निहारते हुइ गुरु कलगीधर पातशाह किसी भेद को नहीं मानते। उनके मानवतावादी दृष्टिकोण की परिचायक में ये पंक्तियां कितनी प्रासंगिक हैं :

कोऊ भइओ मुंडीआ संनिआसी कोऊ जोगी भइओ
कोऊ ब्रहमचारी कोऊ जती अनुमानबो ॥
हिंदु तुरक कोऊ राफजी इमाम साफी
मानस की जात सबै एकै पहिचानबो ॥
करता करीम सोई राजक रहीम ओई
दूसरो न भेद कोई भूल भ्रम मानबो ॥
एक ही की सेव सब ही को गुरदेव एक
एक ही सरूप सबै एकै जोत जानबो ॥१५॥८५॥
(अकाल उसतत)

अत: स्पष्ट है कि श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के अनुपम संदेश, बिना किसी मजहब, जाति, वर्ण तथा देशकाल की सीमाओं के सारी मानव जाति को संबोधित करते हैं, जहां हमारे भारत देश में प्रचलित चारों वर्णों के लिए सांझा उपदेश दिया गया है :

खत्री ब्राहमण सूद वैस उपदेसु चहु वरना कउ साझा ॥
गुरमुखि नामु जपै उधरै सो कलि महि घटि घटि नानक माझा ॥ (पन्ना ७४७-४८)

श्री गुरु अरजन देव जी का पावन संदेश है कि हे भाई! परमात्मा का नाम-सुमिरन का उपदेश क्षत्रिय, ब्राह्मण, वैश्य तथा शूद्र चारों के लिए एक जैसा है। कोई किसी भी वर्ण का हो, जो मनुष्य गुरु-दर्शाए मार्ग पर चल कर ईश्वर का नाम जपता है वही इस संसार में विकारों से बचने में सफल होता है, उसी मनुष्य को ही ईश्वर प्रत्येक शरीर में बसता दिखाई देता है।

वस्तुत: वही अकाल पुरख सर्वत्र समाया हुआ है, यथा :

बलिहारी कुदरति वसिआ ॥
तेरा अंतु न जाई लखिआ ॥
जाति महि जोति जोति महि जाता अकल कला भरपूरि रहिआ ॥ (पन्ना ४६९)

गुरबाणी आशयानुसार चींटी से हाथी तक की रचना एक ही मिट्टी से हुई। सब में वही परमात्मा बोल रहा है। भक्त नामदेव जी का पावन शबद है :

सभै घट रामु बोलै रामा बोलै ॥
राम बिना को बोलै रे ॥१॥रहाउ॥
एकल माटी कुंजर चीटी भाजन हैं बहु नाना रे ॥
असथावर जंगम कीट पतंगम घटि घटि रामु समाना रे ॥
एकल चिंता राखु अनंता अउर तजहु सभ आसा रे ॥
प्रणवै नामा भए निहकामा को ठाकुर को दासा रे ॥ (पन्ना ९८८)

वस्तुत: सर्वधर्म सम्भाव के उद्देश्य से विरचित पावन ग्रंथ श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी, जिनमें विविध भाषाओं, प्रांतों, जातियों, मजहबों के महापुरुषों की बाणी का संकलन है, लाखों सिरों का नित्य इसके चरणों में प्रत्यक्ष गुरु मान कर शीश झुकाना, सर्वधर्म समन्वय, भ्रातृ-भावना, अखंडता, मानवतावादी दृष्टिकोण, सर्वसांझी विचारधारा, साम्प्रदायिक एकता एवं विश्व-बंधुत्व-भाव को दृढ़ करवा कर मानव-कल्याण का सहज व सुंदर मार्ग सुझाते हैं।

गुरसिखी की अमली-पाठशाला 'जोड़ा-घर'

*-स. गुरबख्श सिंह 'प्यासा'**

अपने जोड़े, जोड़ा-घर में रख कर टोकन लेने के पश्चात वह सज्जन एक ओर होकर खड़े हो गये। पांच-सात मिनटों के अंतराल के बाद, सहज ही उधर नज़र पड़ी, तो वह सज्जन किसी ऊहा-पोह में पड़े दिखाई पड़े। सोचा, शायद किसी मित्र/बंधु की प्रतीक्षा कर रहे होंगे। अचानक नज़रें मिल गयीं तो पूछे बिना न रह सका। 'कोई अन्य सेवा मेरे लायक?' वे मुस्कराते हुए मेरी ओर बढ़े और हाथ जोड़ कर, कुछ झिझकते हुए बोले, 'आपसे अपनी कुछ शंकाएं निवारण करने के लिए वार्तालाप करने की इच्छा है। यदि अपना कुछ अमूल्य समय दे सकें तो अति कृपा होगी। वैसे सेवक-जत्था, सुचारू रूप से जोड़ों की सेवा कर रहा है। हां, आपको सेवा से विरत करने के दोष का भागी ज़रूर बनूंगा।'

मैंने उनके जुड़े हाथों को अपने हाथों में ले लिया और उनसे 'जोड़ा-घर' के भीतर आ जाने की विनय की। उनके अंदर आ जाने पर मैंने उन्हें एक कुर्सी पर बिठाया और स्वयं एक स्टूल पर बैठते हुए, उनकी ओर प्रश्नवाचक दृष्टि से देखते हुए वार्तालाप का निमंत्रण दिया।

उन्होंने सर्वप्रथम आभार प्रकट किया और फिर अपने शब्दों को एक प्रकार से संवारते हुए बोले, मैंने आपके सेवक-जत्थे को, गुरमति समागमों में संगत के जोड़ों (चरण पादुकाओं) की सेवा करते हुए देखा है। इसमें कोई शंका नहीं कि जो भी आपके जत्थे को नि:स्वार्थ-भाव से सेवा करते हुए देखता होगा, प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता एवं कई युवाओं को सेवा के लिए प्रेरित किया होगा। तभी तो जत्थे के साथ निरंतर युवा पीढ़ी स्वैच्छा से जुड़ती आयी है।

एक क्षण रुक कर, उन्होंने अपनी बात को आगे बढ़ाया। मैं सिख-धर्म का अनुयायी नहीं हूं परन्तु मेरे मन में सिख धर्म के सर्व-कल्याणकारी धारण-योग्य सद्गुणों के कारण अति श्रद्धा का भाव है एवं सत्य का खोजार्थी होने के कारण अपनी जिज्ञासाओं को शांत करने के लिए आपको यह कष्ट दे रहा हूं। आशा है, आप क्षमा करेंगे।

मैं भी ऐसे सत्य के खोजार्थी के दर्शाये गये भावों को सुन कर प्रभावित हुए बिना न रह सका और विचारों के आदान-प्रदान के लिए अपनी प्रसन्नता दर्शायी।

अगले ही पल में उनकी बातचीत का लहजा एकदम बदल चुका था। ऐसे लगा जैसे यदि कोई संकोच का झीना पर्दा था, तो उतर चुका था, जब उन्होंने बातचीत का सिलसिला इस प्रकार शुरू किया। सरदार साहिब मेरे मन में एक बात उभरी है कि यदि प्राचीन काल में 'जोड़ा-घर' होते तो 'तारा राणी' की खड़ाव चोरी नहीं हो सकती थी और यदि खड़ाव चोरी न होती, तो वह प्रेरणादायक गाथा . . .। बात अधूरी छोड़कर वह खिलखिला कर हंसने लगे। उनके इस रंग को देखकर मेरे भी होंठों पर

**२२, प्रभु पार्क सोसायटी, पुरानी छानी रोड, वडोदरा (गुजरात)-३९०००२ फोन: ०२६५-६५५४३९१*

मुस्कान आ गयी।

अब उनके मूड ने एक और करवट ली, जब उन्होंने अगली बात कुछ इस तरह शुरू की। "इसमें कोई संदेह नहीं, कि जोड़ा-घर की प्रथा का श्रेय सिख-मत को जायेगा, नहीं तो पूजा-घरों में जूते चोरी होना स्वाभाविक मान लिया गया था।"

मैं उनके प्रति-पल बदलते अंदाज को समझने का यत्न कर रहा था कि ये लहरें, किसी प्रलयकारी लहर की भूमिका तो नहीं? तभी उन्होंने अपने लहजे को अति नम्र बनाते हुए कहा, "यदि अन्यथा न लें, तो एक बात पूछना चाहूंगा कि सिख-पंथ में जब किसी गुरसिख को रहत-मर्यादा से विपरीत कार्य करने पर दण्ड-स्वरूप 'तनखाह' लगाई जाती है तो 'गुरु के लंगर' में संगत के जूठे बर्तन साफ करने अथवा जोड़ा-घर में संगत के जोड़ों की सेवा करने को कहा जाता है। एक ओर दण्ड और दूसरी ओर कथित सेवा, यह रमज समझ नहीं आयी?" यह कहते हुए उन्होंने अपनी नज़रें मेरे चेहरे पर टिका दीं, जैसे मेरे मनोभावों को पढ़ने का यत्न कर रहे हों।

एक क्षण के लिए तो मैं भी अचकचा गया। परन्तु शीघ्र ही संभलते हुए कहा, 'भाई साहिब! पहली बात तो यह है कि 'तनखाह' का अर्थ उस प्रकार का दण्ड नहीं जैसा कि यह अवधारणा प्राय: देती है। बल्कि गुरसिख को उसके द्वारा हुई अवज्ञा का बोध मात्र करवाना है कि यह गुरसिख, गुरमति के मार्ग से भटक गया है। सही अर्थों में सिख और गुरु का संबंध मछली और पानी के समान है। जैसे मछली का आदि और अंत पानी है उसी प्रकार सिख की दृष्टि एवं सृष्टि शब्द-गुरु में ही समाहित है। उसका अंतिम लक्ष्य गुरु के शबद को ही धारण (आत्मसात) करना है। यदि गुरु को प्रसन्न करना है तो पूर्णत: समर्पित होकर सतसंगत की सेवा में लीन होना होगा। पांचवें सतिगुरु श्री गुरु अरजन देव जी के पावन वचन हैं :

सेवक कउ सेवा बनि आई ॥
हुकमु बूझि परम पदु पाई ॥ (पन्ना २९२)

लोकाई की सेवा ही प्रभु की सेवा है। यथार्थ में नि:स्वार्थ सेवा ही (सिखी की) गुरसिखी का प्रथम पाठ है और अंतिम कसौटी भी।

सांसारिक कार-विहार में हम किसी वस्तु को पहले परखते हैं फिर कोई धारणा बनाते हैं परन्तु परमार्थ में बात सुनी-सुनाई से शुरू होती है, तर्क सिर उठाता है, परन्तु आस्था, आंखें मूंदकर आगे बढ़ने को प्रेरित करती है। सीमित बुद्धि से असीम को मापना मूर्खता ही कहलायेगी। परन्तु जहां तक संभव है, मनुष्य हाथ नहीं टेकता! क्योंकि श्रद्धा और तर्क मानव-बुद्धि के दो छोर हैं। सांसारिक ज्ञान/विज्ञान के लिए तर्क-शक्ति एक महत्त्वपूर्ण तत्व है। परन्तु श्रद्धा-विहिन तर्क अशान्ति को जन्म देते हैं।

इसी प्रकार प्रेम और श्रद्धा दो ऐसे पंख हैं जो मनुष्य को गगन-विहारी बना देने में भी सक्षम हैं। सत्य तो यह है कि इनके बिना कोई निर्माण संभव नहीं। इसीलिए प्रत्येक सर्वसाधारण मनुष्य के पास चाहे उसके पास तर्क-शक्ति हो न हो श्रद्धा अवश्य होती है, क्योंकि प्रेम और श्रद्धा हृदय के गुण हैं।

प्राय: हम बुद्धि के विकास पर बल देते हैं। परन्तु बुद्धि के साथ-साथ हृदय का विकास-विगास भी जरूरी है अन्यथा मनुष्य 'रोबोट' बन कर रह जायेगा, जो आजकल देखने में आ रहा है। दूसरी ओर श्रद्धा भी अंधी न होकर

'विवेकपूर्ण' हो। नहीं तो चतुर-ढोंगियों द्वारा धर्म का दुरुपयोग होने की संभावना हो सकती है।

जैसे प्रेम, त्याग को जन्म देता है उसी प्रकार श्रद्धा में से सेवा और समर्पण की भावनाएं जन्म लेती हैं। परन्तु इनके मूल में 'गुरु' की कृपा ही सूत्रधार होती है और यही गुरु-कृपा गुरसिखी का आधार है। तभी तो 'मूल-मंत्र' के अंतिम छोर पर 'गुर प्रसादि' की गांठ लगी हुई है और शबद-गुरु श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी में अनेकों पदों में इसे दृढ़ करवाया गया है।

'सेवा' एक ऐसा दुर्लभ कर्म है जो प्रभु के 'कर्म' अर्थात कृपा के बिना संभव ही नहीं।

यथार्थ में 'सेवा' ही गुरसिखी का 'क, ख, ग' है और परमपद प्राप्त करने का सरलतम साधन भी अर्थात् 'मैं' का 'तू' हो जाना अथवा बूंद का सागर हो जाना।

मैंने एक पल रुक कर प्रतिक्रिया जाननी चाही ते वे झटपट बोल उठे, "वाह! कितना सरल और कितना अच्छा है सिख गुरुओं का सिद्धांत!"

उनके मनोभाव देख कर मेरी आंखें सजल हो गयीं और पुन: उसी धारा में बहते हुए कहा, 'भाई साहिब! लोक-सेवा का यह सूत्र गुरसिख ही नहीं, प्रत्येक मानव का मानवीय धर्म है। परन्तु यह तब तक संभव नहीं जब तक सृष्टि एवं सृष्टि-कर्त्ता की अभिन्नता का बोध नहीं होता और जब तक भ्रातृ-भाव पैदा नहीं होगा, बात नहीं बनेगी।"

मनुष्य की खसलत है कि वह तन कर रहना चाहता है और झुकता है तो स्वार्थवश ही उसकी इस मनोवृति पर तरस आता है। चाहे पांव, उसके तन का हिस्सा हैं परन्तु उनकी अहमियत शूद्र अर्थात सेवक के समान है। फिर वह दूसरों के धूल-मिट्टी से लथपथ जूतों (जोड़े) को सहर्ष कैसे उठायेगा? वह इसे कैसे स्वीकार करेगा? यह और बात है कि वह अपनी स्वार्थ-सिद्धि के लिए शाष्टांग-दण्डवत करने से भी नहीं हिचकचाता!

यह बात नहीं कि मनुष्य जानता नहीं कि यह चरण ही हैं जो प्रभु के मार्ग अर्थात सतसंगत में लाने का माध्यम बनते हैं। धन्य हैं वे जिनके मन में शुभ विचार पनपे, प्यास जगी और प्रभु-कृपा सदका, प्रभु के रंग में अपने आप को रंगने के लिए अर्थात् प्रभु का यश सुनने/सुनाने और उनके अनुरूप ढालने के लिए सतसंगत में सम्मिलित होने के लिए व्याकुल हो उठे। मन के आदेशानुसार चरण/चरण पादुकाएं सतसंगत की दहलीज तक ले आयें।

अपने प्रियतम के रंग में रंगे श्रद्धालुओं की चरण-पादुकाओं में लगे रज-कण साक्षी देने के लिए, मुखर होने के लिए बेताब हो उठे! परन्तु हमारे पास वे आंखें कहां? क्या पता ये रज-कण किसी ऐसी विभूति के हों जो जीवन-मुक्त होने की हद पर विचर रहा हो और उनकी छोह से, उनके मन में फैले अंधेरे भी दूर हो जायें जैसा कि पंचम पातशाह जी के निर्मल मनोहर वचन हैं :

जन की टहल संभाखनु जन सिउ ऊठनु बैठनु जन कै संगा ॥
जन चर रज मुखि माथै लागी आसा पूरन अनंत तरंगा ॥ (पन्ना ८२८)

परन्तु ऐसा सौभाग्य किसी विरले को ही प्राप्त होता है, नहीं तो मेरे जैसे आधे-भरे प्राय: छलकते हुए देखे जा सकते हैं, जो लोगों को दिखाने के लिए अपनी कथित सेवा को कलगी/मुकुट की तरह सजा कर प्रदर्शन करने से भी संकोच नहीं करते। कहां तो अहम्-मुक्त होने

चले थे और कहां गांठ पर एक और गांठ लगा ली!

यथार्थ में कामना-रहित सेवा सत्य का मार्ग भी है और मंजिल की ओर खुलने वाला द्वार भी। पूर्ण समर्पण के लिए व्यवहारिक पाठ यह जोड़ा-घर गुरसिख के लिए व्यवहारिक पाठशालाएं हैं। यहां सत्यार्थी को व्यवहारिक शिक्षा मिलती है।

मेरे वीर! यह जोड़ा-घर सेवा के अलावा दण्ड-घर नहीं, ये तो ऐसी व्यवहारिक पाठशालाएं हैं जिनमें गुरसिख खालिस अर्थात् निर्मल बनने की प्रक्रिया में से गुजरता है, परन्तु *"सभि गुण तेरे मै नाही कोइ"* का गुर-उपदेश कभी भी नहीं भूलता, क्योंकि उसका लक्ष्य एक पूर्ण समर्पित सिख अथवा शिष्य होना है। अपनी बात को विराम देते हुए मैंने एक लम्बी सांस ली, जैसे किसी ऊंची घाटी पर चढ़ते थक गया होऊं।

वार्तालाप में अनजाने में यदि कोई अवज्ञा हो गयी हो तो उसके लिए क्षमा मांगते हुए मैंने अपने दोनों हाथ जोड़ दिए। उन्होंने मेरे जुड़े हाथों को स्नेह-पूर्वक अपने हाथों में लेकर अपने माथे से लगाया और मुझे अपनी सद्भावना से ऋणी बनाते हुए, विदा लेकर छोटे-छोटे पग भरते हुए सतसंग अर्थात गुरमति समागम के लिए लगे पंडाल की ओर चल दिए।

. . . शहीद बाबा गुरबख्श सिंघ *(पृष्ठ २४ का शेष)*

से मार करने वाले हथियार थे और इधर बिना कवच-ढाल के सिर्फ चोले धारण किये हुये मुट्ठी भर सिख। फिर भी दर्शनी ड्योढ़ी पर भयानक युद्ध हुआ। महज तलवारों और बरछों से बाबा गुरबख्श सिंघ और साथी सिंघों ने अनगिनत शत्रुओं को मौत की नींद सुला दिया।

सिर्फ तीस सिख कब तक हजारों के लश्कर के आगे टिकते? कई-कई वैरियों को मारते हुए अन्ततः सभी सिख शहीद हो गये। बाबा गुरबख्श सिंघ और उनके साथी सिंघों ने श्री हरिमंदर साहिब की रक्षा के लिए अपने प्राण न्यौछावर कर दिये।

यह घटना १९ मार्गशीर्ष सं. १८२१ (२ दिसंबर सन् १७६४ ई) को घटित हुई थी। अब्दाली की फौजों ने सभी सिखों को शहीद करके श्री हरिमंदर साहिब को ढहा दिया। इस दिन शहीद हुए तीस सिखों में से भाई गुरबख्श सिंघ के अलावा भाई मान सिंघ, भाई बसंत सिंघ और भाई निहाल सिंघ भी प्रमुख थे। सभी शहीद सिखों का अंतिम संस्कार श्री अकाल तख्त साहिब के पीछे वाली भूमि पर किया गया।

अब्दाली ने भले ही इस जंग में श्री हरिमंदर साहिब को बारूद से उड़ा दिया और अमृत सरोवर को मिट्टी से भरवा दिया परंतु सिंघों ने सरदार जस्सा सिंघ आहलूवालिया के नेतृत्व में कार-सेवा करके जल्द ही श्री हरिमंदर साहिब की नई इमारत बना ली और यह पवित्र स्थान पुनः सुशोभित हो गया।

सिख धर्म की विशालता और श्रेष्ठता

*-डॉ. नीतू रानी**

धर्म मनुष्य को सही दिशा प्रदान करता है, एवं मनुष्य को मर्यादा में रहना सिखाता है। सिख धर्म इतना विशाल है कि सभी जातियां, मजहब तथा धर्म आदि इसमें ऐसे समाहित हो जाते हैं जैसे नदियां एक विशाल और गहरे समुद्र में। यह अपनी सर्व-सांझीवालता की भावना के कारण अन्य धर्मों से ऊंचा स्थान रखता है। यह ऐसा धर्म है जो सरबत्त का भला मांगने वाला है। जब भी कहीं अरदास होती है तो उसमें कहा जाता है :

नानक नाम चढ़दी कला, तेरे भाणे सरबत्त दा भला।

इसमें किसी एक व्यक्ति के सुख की कामना न करके सम्पूर्ण समाज के भले की अरदास की जाती है।

सिख धर्म एक नवीनतम धर्म है, जिसकी स्थापना श्री गुरु नानक देव जी ने की थी। उन्होंने नाम जपना, किरत करना, वंड छकना का निर्मल सिद्धांत प्रतिपादित कर समाज से जाति की दीवारों को गिराने का प्रयत्न किया। श्री गुरु नानक देव जी ने भाई मर्दाना जी को साथ रख कर इस बात का सबूत दिया। श्री गुरु अरजन देव जी ने भी जब श्री गुरु ग्रंथ साहिब के पावन स्वरूप का संपादन-कार्य किया तो इसमें बिना किसी जाति-भेद के भक्त कबीर जी, भक्त रविदास जी, भक्त नामदेव जी आदि भक्त साहिबान की बाणी को स्थान दिया। इससे सिद्ध होता है कि सिख धर्म में जात-पात के आधार पर कोई भेदभाव नहीं किया जाता, वरन् माना जाता है कि सभी मनुष्य एक ही अकाल पुरख की संतान हैं। जात-पात तो मनुष्य की बनाई हुई है, अकाल पुरख के सामने तो सब बराबर हैं। उसके घर में कोई जाति नहीं है। हम सबका पिता अकाल पुरख वाहिगुरु है और हम उसके बालक हैं :

एकु पिता एकस के हम बारिक तू मेरा गुर हाई ॥ (पन्ना ६११)

सिख धर्म में देवी-देवताओं की मान्यता नहीं है, बल्कि केवल एक ही निराकार तथा आश्चर्यमयी वाहिगुरु है, जिसे उन्होंने ੴ का नाम दिया है। यह निराकार तथा आश्चर्यमयी वाहिगुरु सदा-सदा रहने वाला है। वह कल भी था, आज भी है और रहती दुनिया तक रहेगा। सिख धर्म में माना जाता है कि परमात्मा समय और स्थान से मुक्त है। भय-रहित तथा वैर-रहित है अर्थात् वह किसी का वैरी नहीं है और न ही कोई उसका वैरी हो सकता है। वह सारी सृष्टि का पालनकर्त्ता है, दुखहर्त्ता है। जपु जी साहिब में श्री गुरु नानक देव जी ने लिखा है:

ੴ सति नामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि ॥ (पन्ना १)

कहने का अभिप्राय है कि सिख धर्म के मूल-मंत्र में ही अकाल पुरख वाहिगुरु को निर्गुण स्वरूप वाला माना है। सिख धर्म के संस्थापक श्री गुरु नानक देव जी ने कहा है

**सपुत्री स. इंद्रजीत सिंघ, करतार कॉलोनी, मिलटरी एरिया, नाभा, जिला पटियाला मो. ९८१५७-३९६७५*

कि परमात्मा किसी मंदिर, मस्जिद में नहीं बल्कि मनुष्य के अपने हृदय में निवास करता है। अत: परमात्मा की प्राप्ति के लिए मनुष्य को घर-बार छोड़कर जंगल में जाने की आवश्यकता नहीं है, बल्कि परमात्मा की प्राप्ति पारिवारिक दायित्वों को निभाते हुए तथा कमल की तरह निर्लेप रहते हुए की जा सकती है। कहने का भाव, वाहिगुरु निर्गुण तथा निराकार स्वरूप वाले हैं।

सिख धर्म में यह स्वीकार किया जाता है कि अकाल पुरख का कभी जन्म नहीं होता, वह अजन्मा है। सिख धर्म अवतारवाद का विरोध करता है। वह देहधारी गुरुओं को मान्यता नहीं देता। उसका विश्वास है कि श्री गुरु ग्रंथ साहिब जैसे छायादार पेड़ के बिना दुनिया में कोई भी अन्य गुरु नहीं है। इसलिए सिख धर्म में व्यर्थ के कर्म-कांड, वहम, व्रत-पूजा, शगुन-अपशगुन, ज्योतिष, जादू-टोने आदि का कोई स्थान नहीं है। गुरु के सिख केवल एक वाहिगुरु का नाम ही जपते हैं।

सिख धर्म ने जहां दार्शनिक रूप से एक नई निर्गुण परम्परा का आरंभ किया है वहीं गुरु के महत्व को भी आंखों से ओझल नहीं होने दिया। यहां यह स्वीकार किया जाता है कि गुरु वह है जो सिख को वाहिगुरु से जोड़ने का मार्ग बताता है। सिख धर्म में दस गुरु साहिबान हुए हैं, जिन्होंने अनेक कठिनाइयों का सामना करते हुए दुनिया के सामने आदर्श स्थापित किए कि अपना धर्म कभी नहीं छोड़ना चाहिए। श्री गुरु तेग बहादर जी धर्म की रक्षा के लिए तत्ती (गर्म) तवी पर बैठे। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने अपना समस्त परिवार धर्म के नाम पर कुर्बान कर दिया। दस गुरु साहिबान के पश्चात् श्री गुरु ग्रंथ साहिब को ही सिखों के गुरु माना जाता है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में आदि से लेकर आज तक जो भी घटित हो चुका है और जो आगे घटित होने वाला है, उसका यथार्थ अंकन है।

सिख धर्म की विशालता का पता हमें "संगत और पंगत" तथा "दसवंध" जैसी धारणाओं से चलता है। तीसरे पातशाह श्री गुरु अमरदास जी ने "पंगत" को आवश्यक मानते हुए कहा, "पहले पंगत पाछै संगत"। सिख धर्म में जात-पात, छुआ-छूत, ईर्ष्या, द्वेष तथा घृणा के बिना सभी लोगों को बिना भेदभाव किए एक ही पंगत में बैठ कर लंगर छकाया जाता है, चाहे कोई राजा हो या रंक। हमारे देश के प्रसिद्ध सम्राट अकबर ने भी पंगत में बैठ कर लंगर छका था। यह वह धर्म है जो मनुष्य को समानता, बराबरता तथा सांझीवालता का पाठ पढ़ाता है।

गुरु साहिबान ने दान के लिए "दसवंध" शब्द का प्रयोग किया है। उन्होंने सभी सिखों को ताकीद की है कि वे अपनी नेक कमाई से दसवां हिस्सा निकाल कर गरीबों की सेवा के लिए लंगर में दें। अपनी कमाई का १०वां भाग धार्मिक कार्यों के लिए निकालना भी सिखों के लिए रहित का भाग बन गया है। यह केवल आर्थिक सहायता नहीं है बल्कि एक आध्यात्मिक सौदा है जो हमें परमात्मा के साथ मिलाने में सहायक होता है। यह हमें मानवता, प्रकृति तथा परमात्मा से जोड़ता है।

सिख धर्म में स्त्री को भी विशेष आदर-सम्मान दिया गया है। श्री गुरु नानक देव जी ने कहा था *"सो किउ मंदा आखीऐ जितु जंमहि राजान ॥"* सर्वप्रथम नारी को ऊंचा उठाने का प्रयास सिख गुरु साहिबान ने ही किया था। जो सिख धर्म इतना विशाल है, जिसमें निम्न वर्ग

(शेष पृष्ठ ४१ पर)

प्रथम वार में मध्य युग-स्थिति-विवेचन और प्रथम गुरु जी का आगमन

*-डॉ. रछपाल सिंघ**

सिख धर्म के महान फिलासफर भाई गुरदास जी ने श्री गुरु नानक देव जी के आगमन से पूर्व की अति दयनीय धार्मिक, राजनैतिक अथवा आर्थिक लूट-खसूट का बहुत बारीकी से चित्रण किया है। उस समय के धर्म, समाज और राजनैतिक व्यवस्था से लोकाई में बड़ी गिरावट आ चुकी थी। सभी ने अपनी-अपनी मर्जी के अनुसार अपने-अपने इष्ट बनाए हुए थे। कोई भी किसी को रोकने वाला नहीं था। जो भी किसी को अच्छा लगता था वह अपनी मर्जी से वही कर्म किए जा रहा था। सभी धर्मों में अन्धविश्वास फैला हुआ था। इसका चित्रण भाई गुरदास जी ने इस प्रकार किया है :

कोइ न किसै वरजई सोई करे जोई मनि भावै। . . .
आपो धापी होइ कै निआरे निआरे धरम चलावै। (पउड़ी १८)

श्री गुरु नानक देव जी के समय चारों वर्णों ने अपने-अपने आश्रम पैदा किए हुए थे। ये आश्रम आगे जाकर ढेर सारे भागों में बांटे गए थे। सन्यासियों ने १० तथा योगियों ने १२ पंथ चलाए हुए थे। शास्त्रों, वेदों और पुराणों की कथाएं सुनाने वाले ब्राह्मण लोग भी आपस में लड़-झगड़ रहे थे :

भई गिलानि जगत्रि विचि चारि वरणि आस्रम उपाए।
दसि नामि संनिआसीआ जोगी बारह पंथि चलाए।
जंगम अते सरेवड़े दगे दिगंबरि वादि कराए।
ब्रहमणि बहु परकारि करि शासत्रि वेद पुराणि लड़ाए। (पउड़ी १९)

चारों ओर पाप का ही प्रचलन था। इस्लाम में हजरत मुहम्मद साहिब द्वारा चलाया हुआ धर्म, बहांत्तर सांप्रदायों में बंटा हुआ था। वे सभी परस्पर वैर-विरोध की भावना से भरे हुए थे। ठाकुरद्वारों को गिरा कर, उनके स्थान पर मस्जिदें बनाई जा रही थीं। गऊ-गरीब को सभी तरफ से मार पड़ रही थी। धरती ऊपर पाप इतने बढ़ गए थे कि उनको रोकने वाला कोई भी नज़र नहीं आ रहा था :

-बहु वाटी जगि चलीआ तब ही भए मुहंमदि यारा।
कउमि बहतरि संगि करि बहु बिगि वैरु विरोधु पसारा। . . .
ठाकुर दुआरै ढाहि कै तिहि ठउड़ी मासीति उसारा।
मारनि गऊ गरीब नो धरती ऊपरि पापु बिथारा। . . .
पापे दा वरतिआ वरतारा ॥ (पउड़ी २०)
-चारि वरनि चारि मजहबां जगि विचि हिंदू मुसलमाणे।
खुदी बखीलि तकबरी खिंचोताणि करेनि धिङाणे। (पउड़ी २१)

पूरे गुरु के बिना चारों तरफ अंधेर ही अंधेर फैला हुआ था। धार्मिक अगुआ आपस में वैर-विरोध में लगे हुए थे। साधारण जनता की

**पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, क्षेत्रीय खोज केन्द्र, गुरदासपुर-१४३५२१ (पंजाब)*

स्थिति अति दयनीय थी। वास्तविक धर्म और सच की किरण कहीं भी नज़र नहीं आ रही थी। धरती ऊपर ऐसा कोई भी साधू-जन अथवा महापुरुष नहीं दिखाई दे रहा था जो इस बिगड़ी हुई भयंकर स्थिति का सुधार कर सके:

बाझु गुरू अंधेरु है खहि खहि मरदे बहु बिधि लोआ।
वरतिआ पापु जगत्रि ते धउलु उडीणा निसिदिनि रोआ। . . .
थंमे कोइ न साधु बिनु साधु न दिसै जगि विच कोआ।
धरम धउलु पुकारै तलै खड़ोआ॥ (पउड़ी २२)

राजनैतिक वातावरण

भाई गुरदास जी के अनुसार श्री गुरु नानक देव जी के आगमन के समय, कलयुग के राज में, देश के शासकों-प्रशासकों की तरफ से कोई भी न्याय की आशा नहीं थी। यह तो इस प्रकार था जैसे वाड़ (सुरक्षा कवच) ही खेत को खा रही हो। वास्तविक ज्ञान से खाली प्रजा झूठ बोल रही थी। स्त्री-पुरुष की कोई भी इज्जत नहीं थी। पैसे की खातिर स्त्री-पुरुष जहां चाहे आ-जा सकते थे। सेवक लोग तो अपने घरों में बैठे रहते थे, परंतु इसके विपरीत गुरु-जन, खुद चेलों के घरों में चल कर आते थे। काजी लोग रिश्वत लेकर लोगों के मूल अधिकारों का विनाश कर रहे थे :

कलि आई कुते मुही खाजु होइआ मुरदार गुसाई।
राजे पाप कमांवदे उलटी वाड़ खेत कउ खाई।
परजा अंधी गिआन बिनु कूड़ कुसतु मुखहु आलाई।
चेले साज वजाइंदे नचनि गुरू बहुतु बिधि भाई।
चेले बैठनि घरां विचि गुरि उठि घरीं तिनाड़े जाईं। . . .
इसत्री पुरखै दामि हितु भावै आइ किथाऊं जाई।
वरतिआ पापु सभसि जगि मांही॥ (पउड़ी ३०)

श्री गुरु नानक देव जी का प्रकट होना

जिस समय लोगों की परेशानियां, मुश्किलें और मुसीबतें अपनी अंतिम सीमा पर पहुंच चुकी थीं, प्रजा की आवाज सुनने वाला, उनकी मुसीबतें कम करने वाला, उनके दुख दूर करने वाला और धार्मिक-सामाजिक पक्ष से उचित अगुआई करने वाला कोई भी नहीं था तब ऐसे विवशता भरे समय के दौर में श्री गुरु नानक देव जी का प्रकाश हुआ। सच्चे सतिगुरु के प्रकट हो जाने पर चारों ओर पापों की पसरी हुई धुंध दूर हो गई, सारे संसार में सत्य का प्रकाश हो गया। जैसे सूर्य के उदय होने से तारे अलोप हो जाते हैं और अंधेरा मिट जाता है, जैसे बब्बर शेर के गर्जने से सभी जंगली जानवर दूर भाग जाते हैं, ऐसे ही श्री गुरु नानक देव जी के प्रकट होने से, धरती से पाखंड और झूठ का वरतारा पंख लगाकर उड़ गया। हर घर में प्रभु का यश गाया जाने लगा, घर-घर में धर्मशाल बन गई। जहां पर भी इस महान गुरु, श्री गुरु नानक देव जी के चरण पड़े, वह स्थान लोगों के लिए पूजने योग्य स्थान बन गया। कलयुग में शिरोमणि गुरु जी का प्रकाश हुआ :

सतिगुरु नानकु प्रगटिआ मिटी धुंधु जगि चानणु होआ।
जिउ करि सूरजु निकलिआ तारे छपि अंधेरु पलोआ।
सिंघु बुके मिरगावली भंनी जाइ न धीरि धरोआ।
जिथे बाबा पैरु धरि पूजा आसणु थापणि सोआ।
सिधासणि सभि जगति दे नानक आदि मते जे कोआ।

घरि घरि अंदरि धरमसाल होवै कीरतनु सदा विसोआ।
बाबे तारे चारि चकि नउ खंडि प्रिथवी सचा ढोआ।
गुरमुखि कलि विचि परगटु होआ ॥ (पउड़ी २७)

प्रथम रूप में श्री गुरु नानक देव जी को अकाल पुरख से बख्शिश मिली। फिर गुरु-बाबा जी ने कठिन संघर्ष किया, मानो रेत जैसा आहार और पत्थरों जैसा बिछौना किया अर्थात् गुरु जी ने इतनी बड़ी कमाई की कि आप जी अकाल पुरख के साथ एकरूप हो गए। सचखंड में से गुरदेव को 'नाम' और 'गरीबी' की दात प्राप्त हुई। गुरु बाबे ने ध्यान धर कर देखा सारी धरती पापों की अग्नि में जलती और हाहाकार करती हुई नज़र आई। पूरे गुरु के बिना कूड़ का अंधेरा ही दिखा। अकाल पुरख के हुक्म से गुरदेव ने उदासियों (सत्य-प्रचार यात्राएं) की रीति चलाई और मानवता का सुधार करने के लिए चल पड़े। इस सत्य की किरण का जहां-जहां पर भी प्रकाश हुआ, कूड़, कुसत्त और अधर्म का नाश हो गया। हिन्दू-मुसलमान दोनों शिरोमणि गुरु के चरणों के साथ लगे। हिन्दुओं ने उनको 'गुरु' और मुसलमानों ने 'पीर' कहा :

नानक शाह फकीर।
हिन्दुओं का गुरु, मुसलमानों का पीर।

इस प्रकार श्री गुरु नानक देव जी ने कलयुग में 'सति नामु' का जाप जपाकर, अकाल पुरख के साथ अभेद होने का नारा बुलंद किया। इसीलिए तो कहा गया है :

. . . कलि तारनि गुरु नानकु आइआ।
(पउड़ी २३)

सिख धर्म की विशालता और श्रेष्ठता

(पृष्ठ ३८ का शेष)

तथा स्त्री वर्ग को भी सम्मान की दृष्टि से देखा जाता है, उस धर्म की प्रशंसा के लिए मेरे पास शब्द नहीं हैं।

सिख धर्म का महानतम ग्रंथ श्री गुरु ग्रंथ साहिब दुनिया के धार्मिक साहित्य में आकार और गुणात्मक पक्ष से सबसे बड़ा और विशाल ग्रंथ है। ये ऐसे जागत ज्योति गुरु हैं जो मनुष्य को उसके अच्छे और बुरे वक्त में सही दिशा दिखाने का कार्य करते हैं, जीने का उचित मार्ग बताते हैं। इस धर्म ग्रंथ में मन को आनंदित करने वाली ऐसी शक्ति है कि किसी भी धर्म का व्यक्ति इसके प्रभाव से नहीं बच पाता। इसकी बाणी का उपदेश किसी एक धर्म के लिए नहीं बल्कि सभी धर्मों के लिए है। इसमें लिखा है :

एक नूर ते सभु जगु उपजिआ कउन भले को मंदे ॥ (पन्ना १३४९)

इसमें एक ही जाति मानी गई है और मानवता तथा सभी को उस अकाल पुरख वाहिगुरु की संतान माना गया है।

अन्तत: सिख धर्म वर्तमान समय का आधुनिक और श्रेष्ठ धर्म है, जो अत्यंत विशाल है। इसकी श्रेष्ठता और विशालता का पता हमें अन्तर्निहित सिद्धांतों से लगता है, जिन पर चल कर कोई भी मनुष्य-मात्र अपना जीवन सफल व सार्थक बना सकता है।

राम-नाम की महिमा

*-डॉ. नरेश**

गुरबाणी में परमेश्वर को अनेक बार 'राम' कहा गया है। साधारणतया 'राम' का नाम लेते ही लोगों के मस्तिष्क में एक भव्य रूप उदीप्यमान होता है, जो कभी अयोध्या का राजकुमार, कभी जटाधारी बनवासी तथा कभी अवध-नरेश बनकर प्रकट होता है, परन्तु गुरबाणी का 'राम' दशरथ-पुत्र 'राम' नहीं है।

अवतारवाद में 'राम' को विष्णु का अवतार कहा गया है परन्तु भक्त कबीर जी जैसे संत भक्तजन 'राम' का अर्थ दशरथ-पुत्र न लेकर इससे कुछ और ही अर्थ लेते हैं। भक्त कबीर जी कहते हैं :

दशरथ-सुत तिहुँ लोक बखाना।
राम नाम का अर्थ है आना।

'राम' शब्द वास्तव में उतना ही पुराना है, जितने वेद हैं। वैदिक संहिताओं में 'राम' शब्द का प्रयोग अनेक बार हुआ है परन्तु यहां इसका अर्थ दशरथ-सुत होने का प्रश्न ही नहीं उठता। साहित्यिक ग्रंथों में सम्भवतः पहली बार 'वाल्मीकि रामायण' में ही राम दशरथ-पुत्र के रूप में प्रस्तुत होते हैं। हालांकि वाल्मीकि के 'राम' भगवान नहीं बनते, पुरुष या अधिक से अधिक महापुरुष ही रहते हैं, लेकिन यहां पर उनके दशरथ-सुत होने में कोई संदेह नहीं है।

पद्म, अग्नि, नारद आदि पुराणों में तथा बाद में भट्टि, क्षेमेन्द्र, कुमारदास, भट्ट, भौमिक, भवभूती, मुरारी, राजशेखर, भास, जयदेव, प्रभृति संस्कृत कवियों की रचनाओं में भी 'राम' के दर्शन होते हैं; किसी में पूर्णतः, किसी में अंशतः; किसी में 'राम' का एक रूप उभरा है किसी में दूसरा।

प्राकृत साहित्य में 'सेतुबंध' तथा भोज की 'चम्पू रामायण' में 'राम' का पौरुष-पक्ष तथा आध्यात्मिक अन्योक्ति के माध्यम से 'राम' की व्याख्या उपस्थित है। सम्प्रदायों में रामानन्दी तो राम-भक्ति के लिए प्रसिद्ध हैं ही, श्री रामानन्द से कई पीढ़ियां पहले शठकोपाचार्य ने घोषणा की थी कि 'दशरथ-सुत बिनाः अन्य शरण वान्नास्मि'।

तात्पर्य यह कि 'राम' यदि वैदिक पुरुष न भी रहे हों, तब भी 'राम' शब्द का प्रयोग अत्यन्त प्राचीन है। कुछ विद्वानों का विचार है कि विष्णु भगवान ईसा से ५०० वर्ष पूर्व राम तथा कृष्ण के रूप में प्रसिद्ध हुए थे। 'प्रसिद्ध हुए थे' से कदाचित यह अर्थ नहीं लिया जा सकता कि इससे पूर्व ये नाम मौजूद ही नहीं थे। हम समझते हैं कि राम का ऐतिहासिक रूप ईसा पूर्व ५०० में (वाल्मीकि रामायण में), साहित्यिक रूप ईसा पूर्व १०० (संस्कृत काव्यों में), साम्प्रदायिक रूप ९०० ई में (आलावारों में) प्राप्त होता है और आध्यात्मिक रूप मध्यकालीन भक्ति-आंदोलन के निर्गुण संतों की बाणी में उपलब्ध होता है। इनमें से अनेक भक्त साहिबान को श्री गुरु ग्रंथ साहिब में स्थान प्राप्त होने से गुरबाणी में 'राम' शब्द निर्गुण-निराकार ब्रह्म (प्रभु) के अर्थ में प्रस्तुत हुआ है।

(शेष पृष्ठ ४५ पर)

**१६९, सेक्टर-१७, पंचकूला-१३४१०९*

बुढ़ापा गुजारने की युक्ति

-श्रीमती प्रतिभा शर्मा, श्री खुशी राम शर्मा*

आधुनिक युग में कई अच्छी बातें हैं परंतु सभी कुछ अच्छा नहीं। एक रिश्ते के सिलसिले में लड़के और लड़की को उनके माता-पिता ने अलग से अकेले में बातचीत करने का मौका दिया ताकि वे एक-दूसरे के विचारों और भावों से अवगत हो सकें। लड़की ने लड़के से पहला प्रश्न किया कि उसके घर में कितने कूढ़ेदान हैं। लड़के ने बड़े भोलेपन से उत्तर दिया कि होंगे दो-चार। एक-आध रसोई में होगा, एक-आध दूसरे कमरे में होगा। लड़की ने कहा कि मैं उन कूढ़ेदानों की बात नहीं कर रही, मैं तो बूढ़ों की गिनती के बारे में पूछ रही हूं।

युवा पीढ़ी का बजुर्गों के प्रति यह दृष्टिकोण बहुत ही निन्दनीय है। कोई इसको समझाने हेतु बनाई कथावार्ता भी समझ सकता है। ऐसी घटना और वार्तालाप कोई अपवाद भी नहीं है। यह सब कुछ तो हर रोज हमारे आस-पास घटित होता है। यह और बात है कि इसका प्रसंग और आकार बदली हुई स्थिति के अनुसार बदल जाता है। कहने को तो बड़ी सरलता से कहा जा सकता है कि यह दो पीढ़ियों का अन्तर है पर मात्र ऐसा ही नहीं है। जिस प्रकार का मनोवैज्ञानिक दुष्प्रभाव और मानसिक विरोध युवा पीढ़ी के मन में बजुर्गों के प्रति है यह मात्र दो पीढ़ियों का अंतर नहीं बल्कि उनका आपसी टकराव है। दोनों पीढ़ियों के बीच मनोवैज्ञानिक और भावात्मक शीत युद्ध की स्थिति बनी हुई है। इस स्थिति के कई कारण हो सकते हैं, परन्तु मूल कारण बदलती हुई आर्थिक व्यवस्था और उसके अनुसार बदलते हुए जीवन-मूल्य हैं। मुक्त व्यापार, आर्थिक निजीकरण और सूचना टैक्नोलोजी ने जिस व्यक्तिवाद को जन्म दिया है वही इस समस्या का मूल कारण है। व्यक्तिवाद विकृत होकर निजी स्वार्थवाद का रूप धारण कर गया है। सामाजिक और पारिवारिक रिश्तों में मानवीय भावनाओं का कोई स्थान नहीं रहा। इसके साथ जुड़ा हुआ है आज के रोजगार का रूप-रंग। जी. पी. एफ. और पैन्शन के अभाव में युवकों का भविष्य अंधकारमय हो गया है। शायद वे जवानी के वर्षों में ही इतना कमा लेना चाहते हैं जिससे उनके बुढ़ापे को मायक चिन्ता ही न रहे। ऐसा करने के लिए उनकी दिनचर्या साधारण से अधिक तेज रफ़्तार से चलने लगी है। फिर इस पर कंपनियों के काम का मन और दिमाग पर इतना बोझ रहता है जिससे उनकी सारी मानसिक और बौद्धिक शक्ति वहीं खर्च हो जाती है। अपनी निजी और पारिवारिक जिंदगी के लिए उनके पास कुछ नहीं बचता, बचता है तो मानसिक दबाव और तेज रफ्तारी। ऐसी जीवन-शैली में मानवीय रिश्तों में सदभाव कैसे पनप सकता है?

इस व्यवस्था में बुजुर्ग अपने को ठगा सा महसूस करते हैं, अकेलापन उनको खाने लगता है। वे सोचते हैं, उनके बच्चे उनकी तरफ ध्यान नहीं देते। वे तो चाहते हैं उनकी सोच में परिवर्तन आ जाए पर वर्तमान स्थिति में ऐसे

*गुरु नानक मार्केट, जालंधर रोड, बटाला (गुरदासपुर)-१४३५०५ मो. ९४१७१-५२२७८

परिवर्तन का आना असंभव है। बुजुर्गों के पास अपने आप को ही बदलने के सिवाए कोई चारा नहीं है और इस अवस्था में यह बदलाव ला पाना भी बहुत कठिन है। फिर भी बदली हुई स्थिति के अनुसार अपनी जीवन-शैली को ही ढाल लेने में उनकी भलाई है।

पहली बात तो यह है कि बुजुर्गों को युवाओं की जीवन-शैली में नहीं उलझना चाहिए। हर वक्त की टोका-टाकी और दखल-अंदाजी अन्तर-विरोध का कारण बनती है। गंभीर स्थितियों में दिशा-निर्देश देने से तो नहीं चूकना चाहिए, परंतु यह कहते रहना कि यह करो, यह न करो, ऐसी बातों से अधिकतर परहेज करना चाहिए। गुरमति धारा के प्रवचनकर्ता रोज अपने प्रवचनों में बुजुर्गों को समझाते हैं कि कम से कम बोलो, इतना बोलो जितनी जरूरत है। प्रवचनकर्ता कई बार लाईट अथवा हलके-फुलके अंदाज में यह भी कहते हैं बुढ़ापे में सभी अंग शिथिल पड़ जाते है परन्तु जुबान जवान हो जाती है और तेजी से चलने लगती है। ऐसे सुझाव हमारे लिए और सभी के लिए अच्छे हैं।

कुछ बुजुर्ग यह कहते नहीं थकते कि वे अब घर-गृहस्थी से मुक्त हैं; कोई काम नहीं करते, सिर्फ ऐश करते हैं। पता नहीं काम न करने से कौन सी ऐश होती है! काम करने से जो आनंद की प्राप्ति होती है उसका शायद हम बुजुर्गों को अनुभव नहीं। घर-गृहस्थी चलाने में बहू-बेटे की सहायता करने के लिए छोटे-मोटे काम करने से मानसिक खुशी प्राप्त होती है और परिवार का मनोवैज्ञानिक वातावरण स्वस्थ रहता है। अपनी सेहत और अवस्था के अनुसार काम करना श्रेष्ठ है। कोई न कोई शौक पालने से भी तन्हाई का अहसास कम हो जाता है। शौक कोई भी हो सकता है। उनमें पढ़ने-लिखने का शौक सबसे बढ़िया है। अच्छी पुस्तकें सबसे बढ़िया साथी हैं। ये जब चाहें जितनी देर चाहें आपके साथ कदम-कदम चलती हैं। फूल-बूटे, पेड़ लगाना एक अच्छा शौक है। आज के नित्य-प्रतिदिन दूषित हो रहे वातावरण को सुधारने में भी उनका यह कर्म हिस्सा डालेगा। समाज सेवा भी बहुत लाभकारी शौक है। अपने लिए तो सभी काम करते हैं पर जो दूसरों के लिए करते हैं उनको उत्तम प्रकार के आनंद की अनुभूति होती है। अपने आप को जीवन में बनाए रखने के लिए यह सब बातें बहुत ही जरूरी हैं।

सेहत का ध्यान रखना सबसे महत्वपूर्ण कार्य है। सेहत है तो जहान है वरना कुछ भी नहीं। अपनी सेहत और पाचन-शक्ति के अनुसार पौष्टिक भोजन लेना लाभदायक सिद्ध होता है। इस आयु में जीभ के स्वाद की लालसा से बहुत सी समस्याएं खड़ी हो जाती हैं, अपने आप पर नियंत्रण करना ही हितकारी है। कुछ व्यायाम, कुछ सैर इस आयु की स्वाभाविक मांग है। घर में व्यायाम करने से सेहत को ठीक रखा जा सकता है परन्तु सैर का कोई जवाब नहीं। सुबह हम जब सैर को जाते हैं ऊषा की लालिमा हमारा स्वागत करती है, स्वर्णिम किरणों में प्रकृति अंगड़ाई लेती है, पक्षी-पौधे-वृक्ष मन को लुभाते हैं। ऐसा आनंद घर में व्यायाम करने से कहां मिलता है? सिर्फ बाहर जाने से बहुत से परिचितों से मुलाकात हो जाती है। एक-दूसरे के साथ बात करने से मानवीय संवाद की रचना होती है जो तन्हाई के अहसास को कम करती है।

धन के प्रति सही दृष्टिकोण अपना कर बुजुर्ग अपने बुढ़ापे को खूब सुखी बना सकते हैं। अपनी सुरक्षा के लिए पर्याप्त धन रख कर यदि

आपके पास कुछ शेष बचता है तो उसका सदुपयोग दूसरों अथवा जरूरतमंदों पर खर्च करने से हो सकता है। जो खुशी दूसरे पर धन खर्चने से होती है वह सहज और अध्यात्ममुखी होती है। ऐसा करने से मानवीय रिश्तों में भावात्मक सांझेदारी और निकटता का अहसास होता है।

बुढ़ापे को बुढ़ापे की तरह जीना चाहिए। यह भी जीवन की उतनी ही सुंदर अवस्था है जितनी जवानी और बचपन। जवानी और बचपन को याद करके बुढ़ापे के वर्तमान से दुखी होने का क्या लाभ? वो तो वापस नहीं आ सकते। बुढापा हमारा अपना है, हमारे पास है, इसको जी-जान से, सकारात्मक रूप से जीना श्रेष्ठ है। इन सब बातों के अलावा जो सबसे अधिक महत्वपूर्ण और आवश्यक बात है वह यह है कि बुजुर्गों में सच्चे पातशाह वाहिगुरु के प्रति सच्ची आस्था होनी चाहिए। सहज दृढ़ विश्वास मनुष्य को अध्यात्ममुखी बना देता है जिससे उसकी कठिनाइयों को सहने की शक्ति बढ़ जाती है। शर्त यह है कि यह आस्था और विश्वास कर्मकाण्ड, अहं-भाव से मुक्त होना चाहिए। तभी मुश्किलों को सहन करने की अपार शक्ति पैदा होगी और परमात्मा हमारे अंग-संग रहेगा।

श्री गुरु अमरदास जी ने हमारी आदर्श अगुआई हेतु कथन किया है:

गुरमुखि बुढे कदे नाही जिन्हा अंतरि सुरति गिआनु ॥
सदा सदा हरि गुण रवहि अंतरि सहज धिआनु ॥
ओइ सदा अनंदि बिबेक रहहि दुखि सुखि एक समानि ॥
तिना नदरी इको आइआ सभु आतम रामु पछानु ॥ *(पन्ना १४१८)*

राम-नाम की महिमा

(पृष्ठ ४२ का शेष)

'राम' के 'आना' (अन्य) अर्थ तक पहुंचने के लिए 'राम' शब्द से शुरू होने वाले कतिपय अन्य शब्दों पर भी विचार करना होगा। निश्चय ही रामजमानी, रामतरोई, रामरस, रामकांटा आदि वस्तुओं के इस प्रकार के नामकरण के पीछे दशरथ-सुत की विद्यमानता नहीं रही होगी।

गुरबाणी अर्थात् श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी का 'राम' निराकार, निर्भय परमेश्वर है, जिसके चरणों की धूल अनेक अन्य राम हैं, कृष्ण हैं, उनकी कथाएं हैं, वेद हैं तथा वेदों के सिद्धांत हैं:

नानक निरभउ निरंकारु होरि केते राम रवाल ॥
केतीआ कंन्ह कहाणीआ केते बेद बीचार ॥
(पन्ना ४६४)

इसी को और अधिक स्पष्ट करते हुए श्री गुरु नानक देव जी ब्रह्मवाचक शब्द 'राम' को जीवात्मा का पर्याय बनाकर आत्मा-परमात्मा को अभेद कर देते हैं। कथन है :

आतम महि रामु राम महि आतमु चीनसि गुर बीचारा ॥ *(पन्ना ११५३)*

अस्तु, अवतारवाद के अंतर्गत 'राम' का दशरथ-सुत के रूप में प्रसिद्ध एवं पूज्य होना अपनी जगह है, परंतु गुरबाणी का 'राम' इससे सर्वथा भिन्न है। गुरबाणी का 'राम' ब्रह्म है, जो सति नामु है, करता पुरखु है, निरभउ है, निरवैरु है, अकाल मूरति है, अजूनी है, सैभं है।

मृत्यु-विवेचना

*-ज्योति खरे**

परमात्मा सत् चित् आनंद स्वरूप है, अनादि और अनंत है, न कभी उसका जन्म हुआ, न वह कभी मरने वाला है। उसी ज्वालमाल की छोटी चिंगारी आत्मा है। जो गुण अंशधर में होते, वही अंशों में भी पाए जाते हैं।

ब्रह्मंडीय चेतना पारब्रह्म है। पिंड की परिधि में जो काम करती है वही सत्ता आत्मा है, फिर उसकी विशेषताएं उसमें क्यों नहीं होनी चाहिएं? परमात्मा अमर है तो उसके अंशधर का मरण कैसे हो सकता है?

मरण की विवेचना हम जिस रूप में करते हैं वह सही नहीं है। शरीर के बदल जाने की प्रक्रिया को हम मौत मान लेते हैं। यह मौत हो भी सकती है, पर वह आत्मा की नहीं, शरीर मात्र की है। जीवन भर में मनुष्य सैकड़ों बार कपड़े बदलता है। वे वस्त्र अनेकों रंगों और डिजायनों के भी होते हैं, पर उस बदलाव के कारण कोई यह नहीं कहता कि व्यक्ति बदल गया। यह परिवर्तन की दृष्टि क्षेत्र तक ही सीमित है। उसका प्रभाव आत्मा तक नहीं पहुंच सकता। शरीर के मरने पर आत्मा नहीं मरती, वह तो यथावत बनी रहती है। अंतर केवल इतना ही आता है कि जो स्थूल था वह सूक्ष्म हो जाता है। शरीर सूक्ष्म हो जाने से उसकी आकृति स्थूल आंखों से दीख नहीं पड़ती। इस परिवर्तन को सूक्ष्मीकरण भी कह सकते हैं।

पदार्थों का सूक्ष्मीकरण होता रहता है। उनकी आकृति में अंतर आता रहता है, पर मूल सत्ता यथावत बनी रहती है। पानी ठोस होकर बर्फ बन जाता है, प्रवाही होता है तो जल कहलाता है। भाप बन कर वह वायु रूप होता और अदृश्य बन जाता है। यह प्रत्यक्ष परिवर्तन होते रहने पर भी उसकी मूल सत्ता में कोई अंतर नहीं आता। जल का अस्तित्व चिरकाल से ही है और वह अन्य पंचतत्वों की तरह अपनी सत्ता बनाए रहेगा।

जीव न मरता है और न मर सकता है। मात्र उसका कलेवर ही अपने समय पर बदल जाता है। यह परिवर्तन एक चक्र है। शुक्र, भ्रूण, शिशु, बालक, किशोर, तरुण, प्रौढ़, वृद्ध, मरण और फिर उसी निर्धारित चक्र की पुनरावृत्ति।

कुछ मध्य काल ऐसा अवश्य है, जिसमें सूक्ष्म शरीरधारी को स्वच्छंद विचरण करने का अवसर मिल जाता है। इस अवधि में वह विश्राम भी ले लेता है और पिछले दिनों की संग्रहीत गंदगी की धुलाई करके इस योग्य बन लेता है कि नए जन्म में पुराने जन्म के संस्कार अधिक बाधा न पहुंचाएं। कर्मफल तो साथ रहते हैं और उन्हीं दिनों यह भी अनुभव हो जाता है कि पाप-कर्मों की परिणति क्या है और पुण्य-कर्मों की क्या? इस प्रकार कुछ महत्वपूर्ण अवसर प्राप्त करने का और थकान मिटाने का अवसर मिल जाता है जैसे थका हुआ व्यक्ति रात को गहरी नींद सो लेता है तो दूसरे दिन सवेरे से ही उसे स्फूर्ति के साथ काम में जुटने का मन होता है।

प्रत्येक जीव स्वतंत्र है। उसकी अपनी एक

***संपादक 'अभिसारिका', 'विभावरी' जी-९, सूर्यपुरम्, नंदनपुरा, झांसी-२८४००३ (उ. प्र.)*

स्वतंत्र इकाई है। वह अकेला ही जन्म लेता है और अकेला ही मरता है। न कोई साथ आया है और न कोई साथ जाता है।

सृष्टि की व्यवस्था ऐसी है कि मनुष्य मिल-जुलकर रहें और एक-दूसरे की सहायता करते हुए आदान-प्रदान का लाभ लें। इसी प्रक्रिया के अंतर्गत परिवार बन जाता है। स्वजन, संबंधी, मित्र, परिचितों का सिलसिला जुट जाता है और अनुभव होता है कि वे परस्पर सघनतापूर्वक बंधे हुए हैं, एक दूसरे के ऊपर निर्भर हैं। यह ममता जितनी घनिष्ठ होती है उसी अनुपात में मरण पर होने वाले बिछोह का दुख होता है। कई बार एक दूसरे पर निर्भरता भी होती है। विशेषतया बच्चों की परवरिश अभिभावक करते हैं। उनके न रहने पर वे दूसरों की दया के सहारे भी पल तो जाते हैं परन्तु उतने निश्चित और प्रमुदित नहीं रहते, जैसे कि पहले रहा करते थे। मां-बेटे के बीच, पति-पत्नी के बीच भी कई बार ऐसी सघनता होती है और उसी अनुपात में उन्हें वियोग-दुख भी सताता है। किन्तु क्या वस्तुतः एक दूसरे के साथ वे इतनी ही घनिष्ठता के साथ बंधे हुए हैं? इसका उत्तर 'न' में ही देना पड़ता है। प्रियजनों की मृत्यु का दुख कुछ काल सताता है, फिर झीना पड़ने लगता है। कुछ समय उपरांत तो उस विलगांव की धुंधली स्मृति ही शेष रह जाती है।

पुरानी निर्भरता भी दूसरों पर बंट जाती है, कोई स्वजन संबंधी सहायता करने लगते हैं या फिर स्वावलंबन उभरता है और गाड़ी अपने ढर्रे पर लुढ़कने लगती है।

जिस प्रकार नदी में बहते हुए कुछ लट्ठे इकट्ठे हो जाते हैं और फिर लहरों का दबाव पड़ने पर बिछुड़ जाते हैं। बिछुड़ी हुई लकड़ियां जिस-जिस के साथ अपनी संगति बिठा लेती हैं और फिर एक बजरे के रूप में बहने लगती हैं। जो लकड़ी पहले जिनके साथ थी उनसे अलग होकर वह दूसरों के साथ सट जाती है और फिर बहाव के साथ चलने लगती है। संसार की नियति ऐसी ही है। प्राणी जन्मते, मरते और मिलते-बिछुड़ते रहते हैं। जो कुछ आश्चर्य और असमंजस होता है, शोक में विलाप करना पड़ता है, वह ममता के बंधन जुड़ने और टूटने से होता है, अन्यथा न जाने कितने व्यक्ति हर दिन जन्मते और मरते रहते हैं। जलती हुई चिताओं को देखकर कौतूहल मात्र प्रतीत होता है। बात स्वाभाविक भी है। मरण-जन्म के आधार पर चल रहे इस संसार में कौन किसके लिए खुशी मनाए और क्यों कोई किसी के लिए विलाप करे!

मरण एक उच्चकोटि का अध्यापक, धर्म एवं दार्शनिक है, जो बताता है कि निर्धारित कर्त्तव्यों का परिपालन करते हुए सुखपूर्वक रहो और साथियों को रहने दो, जो जीवन के स्वरूप, उद्देश्य और उपयोग को समझता और पालता है उसके लिए मृत्यु न तो कष्टकारक होती है और न भयप्रद।

हम धन्यवाद करते हैं स. त्रिलोक सिंघ जी, निवासी दमोह (मध्य प्रदेश) का, जिन्होंने कठिन परिश्रम करके गुरु-इतिहास तथा गुरबाणी के प्रचार-प्रसार हेतु क्रमशः ५०, ४०, कुल ९० सज्जनों को प्रेरित कर उन्हें 'गुरमति ज्ञान' का आजीवन सदस्य बनाया। अकाल पुरख वाहिगुरु स. त्रिलोक सिंघ जी को सदा स्वस्थ रखें ताकि वे यूं ही धार्मिक कार्यों में रुचि लेकर गुरु-घर की खुशियां प्राप्त करते रहें। -संपादक।

कविता

संत-सिपाही

*-श्री सुरजीत 'दुखी'**

हसरत को हकीकत में बदलने वाले,
जनता के मसीहा, मुल्क के मतवाले,
जालिमों के अत्याचार से टकराने वाले,
बलिदान की मशाल को जलाने वाले,
तुम्हें आदाब कहता हूं, मैं जनाब कहता हूं।
कहां से शुरू करूं मैं, अफसाना बनी तेरी कहानी?
कितनी बड़ी होती है, नौ साल की जवानी!
पिता गुरु तेग बहादर को बलिदान की प्रेरणा दे,
कशमीरी पंडितों की अत्याचार से असमत बचानी।
आपने मुगलों के खिलाफ खड़ग उठा डाली।
पहाड़ी राजाओं की हालत बुरी बना डाली।
निर्भय, साहसी और योद्धा बने ऐसे कि
भारत से मुगल साम्राज्य की नींव हिला डाली।
आपने चमकौर युद्ध में, अजीत सिंघ ,जुझार सिंघ कुर्बान किए।
आंखों के तारे जोरावर सिंघ, फतह सिंघ तक वार दिए।
अत्याचारियों के विरुद्ध ऐसा अभियान चलाया था।
जिगर के चारों टुकड़े वार, ममता को बलिदान का पाठ पढ़ाया था।
एकता और अखंडता का ऐसा बिगुल बजाया।
जातिवाद और अलगाव को जड़ से उखाड़ गिराया।
खालसा पंथ चला, मुफलिसों का उद्धार किया।
जल छका भाई घनैया ने, सब घायलों का उपचार किया।
आप जैसा कौन गुरमुखी, संस्कृत, अरबी, फारसी का विद्वान है?
अनेकों गुणों की खान है यह जो एक इंसान है।
आपकी सारी रचनाओं में ईश्वर-स्तुति और गुणगान है।
इनमें जापु साहिब, बचित्र नाटक और अकाल उसतत महान है।
जफरनामा लिख आपने औरंगजेब को हिलाया था।
५२ कवियों को भी राजकीय सम्मान दिलाया था।
धर्म की रक्षा के लिए, खालसा पंथ चलाया था।
तभी तो गुरु गोबिंद राय, गुरु गोबिंद सिंघ कहाया था।
आत्म-शक्ति के बल से, कंठ से बाणी उचराई।
तख्त दमदमा साहिब में, नई बीड़ तब लिखवाई।
५८७४ पावन शबदों वाले गुरु ग्रंथ साहिब को,
नांदेड़ सचखंड हजूर साहिब में, मिल गई तब गुरिआई।
कलम आज उठी है, उस योद्धा की गाथा गाने को।
अपने युग के इन्सां का धर्म और फर्ज सिखाने को।
साहसी, वीर, कर्मशील और रक्षक बनाने को।
इससे ले प्रेरणा खुद को, 'दुखी' अमली जामा पहनाने को।

**म. न. ३३२/९, गली जट्टां, अन्दरून लाहौरी गेट, अमृतसर*

कविताएं

अजन्मी पुत्री की मां को पुकार

*-बीबा हरप्रीत कौर**

अजन्मी पुत्री मां को कहने लगी,
किस बात से हुई दिलगीर माता?
तेरी मेरी नहीं मुलाकात हुई,
सीने मारती क्यों हो तीर माता?
हाथों दिया तेरा मैंने ले जाना,
तेरा पीकर अमृत सा शीर माता!
मांए मेरिए! पाप यह बहुत बुरा,
तनिक समझ, बना तू धीर माता!
'धीआं धिरां' सियाने लोग कहते,
मेरे जिस्म को न तू चीर माता!
लगाऊं कोख को तेरी, न दाग़ कोई,
रख अपनी ऊंची ज़मीर माता!
बज्र पाप यह, इससे बड़ा पाप कोई न,
कर जुल्म की न अखीर माता!
बज्र पाप की भागी न बन माता,
मुझे कर न लीरो-लीर माता!
पूछ उससे जिसकी गोद खाली,
गोद लेते हैं बच्चे अमीर माता!
पुत्र-पुत्री में माता न फर्क कोई,
इतनी हो न तू अधीर माता!
तू हकीकत से मुख न फेर माता,
बिना दूध के बने न खीर माता!
जन्म लेने दे अंदर संसार मुझको,
रूखी रोटी देना व ठण्डा नीर माता।
बस तू विद्या मुझे दिला देना,
यही देना दहेज अखीर माता!
बाबुल डोली के बीच बिठा देंगे,
करूं दोनों का नाम अमीर माता!
तुमको आयेगी ठंडी हवा मेरी,
'हरप्रीत' बुरा संस्कार दे चीर माता!

**पौत्री कवीशर स्वर्ण सिंघ, गांव-डाक सरली कलां, तह. खडूर साहिब, जिला तरनतारन। (पंजाब)*

मूक पुकार

जो बोलते है मैं प्रेम करता हूं,
वो नहीं जानते कि प्रेम क्या है।
जो उर से प्रेम करते हैं
वे सदीवी आनंद का अनुभव करते हैं।
जो लालच के लिए प्रेम करते हैं
बदले में सिर्फ उसके दुख मिलते हैं।
क्या आपको सच्चे प्रेम का पता है?
सच्चा प्रेम किसे कहते हैं और किसे करना चाहिए?
सच्चा प्रेम वो है जो सिर्फ देता है प्यार,
और कुछ भी नहीं मांगता मुख से उचार,
क्योंकि अकाल पुरख है प्यार ही प्यार,
वे सुनते हैं हमारी मूक पुकार,
दुख दें, सुख दें,
हमको होना है उनका शुक्रगुजार।
कुछ देर पहले मेरी मां हुई थी बहुत बीमार।
गुरु महाराज की कृपा से हमारी मूक पुकार,
सुनी गई प्रभु के दरबार।
इससे मेरा अकाल पुरख की कृपा में,
उसकी मदद की किरणों पर,
बन गया पूर्ण विश्वास।
उसका सदैव स्थिर नाम,
मेरा जीवन-आश्रय बन गया
और बन गया मेरा जीवन आधार।

-स. अमनप्रीत सिंघ, छात्र कक्षा ८, विशखापट्टनम।

गुरबाणी राग परिचय-१६

रागु बिलावलु : सदा बिलावलु अनंदु है जे चलहि सतिगुर भाइ

*–स. कुलदीप सिंघ**

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में सूही राग के बाद रागु बिलावल की बाणी क्रमांक १६ पर ६४ पन्नों में (७९५-८५८) अंकित है। राग माला के अनुसार रागु बिलावलु भैरउ राग की रागिनी है :

प्रथम भैरवी बिलावली ॥
पुंनिआकी गावहि बंगली ॥
पुनि असलेखी की भई बारी ॥
ए भैरउ की पाचउ नारी ॥ (पन्ना १४३०)

गुरबाणी के अनुसार राग बिलावलु एक स्वतंत्र राग है। यह बिलावल थाट का प्रमुख राग है। इस राग में सभी स्वर शुद्ध लगते हैं, किन्तु कभी-कभी धैवत के संयोग से आरोह में 'नी' का उपयोग कोमल रूप के अतिरिक्त बिलावल राग की बाणी में पन्ना ८४३ पर श्री गुरु नानक देव जी के एक छंद *"मुंध नवेलड़ीआ गोइलि आई राम"* पर बिलावली दखणी अंकित है। बिलावल दखिणी के आरोह में गंधार और निषाद स्वर वर्जित है। उत्तर भारत की संगीत पद्धति को बिलावल दखणी श्री गुरु नानक देव जी की अनुपम देन है। राग बिलावल का दूसरा गौण रूप बिलावल मंगल है, जिसका शीर्षक पन्ना ८४४ पर श्री गुरु रामदास जी के छंद पर अंकित है। बिलावल मंगल के आरोह में पंचम स्वर वर्जित है।

राग बिलावलु के १४९ शबदों के तीन क्रमांक दिये गए हैं। प्रथम क्रमांक के १७ शबदों में श्री गुरु नानक देव जी के ४, श्री गुरु अमरदास जी के ६ तथा श्री गुरु रामदास जी के ७ शबद हैं। द्वितीय क्रमांक में श्री गुरु अरजन देव जी के १२९ शबद हैं तथा अन्त में श्री गुरु तेग बहादर जी के ३ शबद हैं।

राग बिलावल का आरंभ श्री गुरु नानक साहिब के द्वारा निरंकार प्रभु की स्तुति (सिफ्त सालाह) से होता है। जीव अल्पज्ञ या अंधा है, उसकी चेतना सीमित है, वह अकथ्य प्रभु के गुणों का वर्णन नहीं कर सकता। हो सकता है कि उसके द्वारा की गई स्तुति निंदा का रूप हो जावे, जैसे किसी सम्राट की एक नगर के अधिकारी के रूप में प्रशंसा की जाए। प्रभु के द्वारा दी गई सूझ के अनुसार ही जीव उसके गुणों का एक अंश मात्र कह सकता है, जो प्रभु के सत्य स्वरूप के निकट हो। इसी सूझ से उसका तादातम्य प्रभु से हो जाता है। मिलन में एक कठिनाई है जीव का विकार से घिरे रहना। जीव इन विकारों से घिर कर प्रभु से अलग हो जाता है, फिर भी वह मुक्ति के लिए पुकारता है। प्रभु के स्मरण के कारण आत्मा को विश्वास है कि स्वामी के नाम की महिमा से उसका उद्धार होगा :

तू सुलतानु कहा हउ मीआ तेरी कवन वडाई ॥
जो तू देहि सु कहा सुआमी मै मूरख कहणु न जाई ॥१॥
तेरे गुण गावा देहि बुझाई ॥
जैसे सच महि रहउ रजाई ॥१॥रहाउ॥
जो किछु होआ सभु किछु तुझ ते तेरी सभ असनाई ॥
तेरा अंतु न जाणा मेरे साहिब मै अंधुले किआ

*C/o S. Gurmeet Singh, H-230/MDC/Sec-5, Shikhar Apartment, Panchkula.

चतुराई ॥२॥
किआ हउ कथी कथे कथि देखा मै अकथु न कथना जाई ॥
जो तुधु भावै सोई आखा तिलु तेरी वडिआई ॥३॥
एते कूकर हउ बेगाना भउका इसु तन ताई ॥
भगति हीणु नानकु जे होइगा ता खसमै नाउ न जाई ॥ (पन्ना ७९५)

श्री गुरु अमरदास जी के अनुसार प्रभु जिसे गुरु के उपदेश के माध्यम से अपने में प्रीति उत्पन्न करता है, उसके घर में मंगलयम (बिलावलु) आनंद रहता है। उसकी इंद्रियां परमेश्वर के नाम का गायन करती हैं और परमेश्वर से मिलकर सुख प्राप्त करती हैं :

गुरमुखि प्रीति जिस नो आपे लाए ॥
तितु घरि बिलावलु गुर सबदि सुहाए ॥
मंगलु नारी गावहि आए ॥
मिलि प्रीतम सदा सुखु पाए ॥ (पन्ना ७९८)

श्री गुरु रामदास जी ने अपने शबद में हरि-नाम को कलियुग के जहाज का रूप दिया है, जिसका खेवट गुरु-शबद है। इसलिए हे संतो! आओ और मिलकर हरि-कीर्तन करो। राम-नाम रसायन के समान है। हे संतो! इस रसायन का सेवन जप के द्वारा करो। हरि-भजन से चार पदार्थ, चार पुरुषार्थ—धर्म, अर्थ काम, मोक्ष की प्राप्ति होती है :

राम नामु रसु राम रसाइणु हरि सेवहु संत जनहु ॥
चारि पदारथ चारे पाए गुरमति नानक हरि भजहु ॥ (पन्ना ८००)

श्री गुरु अरजन देव जी के मनोहर शबद में सारी चतुराई छोड़ कर उस अकेले प्रभु की ओट लेने के निश्चय को दृढ़ता से व्यक्त किया गया है। कोई उस ऊंचे अपार और अंतहीन स्वामी के गुणों की महिमा को जान नहीं सकता। उसके गायन से भी उद्धार होता है और सुनने से भी उद्धार होता है तथा सभी पाप नष्ट हो जाते हैं। वह प्रभु सभी का उद्धार करने वाला है जिनमें प्रेत, मूर्ख, पशु तथा निर्जीव पशु सभी सम्मिलित हैं। सदा उस पर बलिहार जाना चाहिए :

मै मनि तेरी टेक मेरे पिआरे मै मनि तेरी टेक ॥
अवर सिआणपा बिरथीआ पिआरे राखन कउ तुम एक ॥ . . .
ऊच अपार बेअंत सुआमी कउणु जाणै गुण तेरे ॥
गावते उधरहि सुणते उधरहि बिनसहि पाप घनेरे ॥
पसू परेत मुगध कउ तारे पाहन पारि उतारै ॥
नानक दास तेरी सरणाई सदा सदा बलिहारै ॥ (पन्ना ८०२)

प्रभु अपने जीवों की स्वयं रक्षा करता है। सभी हरि-जन अपनी जिह्वा से हरि-रस का गायन करो, उस राम रसायण से आत्मा तृप्त होगी और करोड़ों जन्मों की तृष्णा मिट जायेगी:

राखि लीए अपने जन आप ॥ . . .
गुण गोविंद गावहु सभि हरि जन राग रतन रसना आलाप ॥
कोटि जनम की त्रिसना निवरी राम रसाइणि आतम ध्राप ॥ (पन्ना ८२१)

श्री गुरु ग्रंथ साहिब के आरंभिक शबद के अनुसार मैंने अपने गुरु से पूछ कर देखा है कि कहीं और स्थान नहीं है, इसलिए माया के मोह में आसक्त न हो।

बिनु हरि कामि न आवत हे ॥
जा सिउ राचि माचि तुम्ह लागे ओह मोहनी मोहावत हे ॥ (पन्ना ८२१)

इस शबद में कामिनी के मोहनी रूप, तृण से बने महल से साक्षात्कार कराया गया है कि वह किस प्रकार क्षण भर में नष्ट होने वाला है :

कनिक कामिनी सेज सोहनी छोडि खिनै महि जावत हे ॥

उरझि रहिओ इंद्री रस प्रेरिओ बिखै ठगउरी खावत हे ॥
त्रिण को मंदरु साजि सवारिओ पावकु तलै जरावत हे ॥
ऐसे गड़ महि ऐठि हठीलो फूलि फूलि किआ पावत हे ॥ (पन्ना ८२१)

मृत्यु के समय धन-सम्पत्ति, स्त्री और भोग क्षण भर में ही छोड़कर जाना होता है। इंद्रियों के विषयों से ठगा जाकर उन्हीं के रस में उलझ कर विषयों का भोग कर रहा है। मनुष्य का शरीर तिनकों का मंदिर है, जिसके नीचे काल की अग्नि निरंतर जल रही है। ऐसे गढ़ में रहकर हठीला व्यक्ति मिथ्या अभिमान में अकड़-अकड़ कर क्या प्राप्त करता है?

पांच विकार उसके सिर पर खड़े हैं और केशों को पकड़ कर घुमा रहे हैं। विकारों की मस्ती में उस मूर्ख को कुछ नज़र नहीं आता। काल ने जाल फैला कर नीचे दाना बिछा रखा है, जिसमें अनजान व्यक्ति पक्षी की तरह फंस जाता है। बंधन काटने के लिए परम पुरुष के ध्यान की आवश्यकता है :

पंच दूत मूड परि ठाढे केस गहे फेरावत हे ॥
द्रिसटि न आवहि अंध अगिआनी सोइ रहिओ मद मावत हे ॥
जालु पसारि चोग बिसथारी पंखी जिउ फाहावत हे ॥
कहु नानक बंधन काटन कउ मै सतिगुरु पुरखु धिआवत हे ॥ (पन्ना ८२१-२२)

राग बिलावल में श्री गुरु अरजन देव जी के शबदों में लालित्य एवं चिंतन के उदाहरण-स्वरूप केवल दो शबदों का उल्लेख और किया जाना आवश्यक है। माधुर्य एवं लालित्य के उल्लेखनीय शबद में अकथ कथा के परमेश्वर ने श्याम सुंदर का रागमय स्वरूप धारण किया है। श्री गुरु अरजन देव जी प्रेममय परमात्मा में अपने प्रेम की अभिव्यक्ति अनुपम रूप से करते हैं :

मू लालन सिउ प्रीति बनी ॥रहाउ॥
तोरी न तूटै छोरी न छूटै ऐसी माधो खिंच तनी ॥१॥
दिनसु रैनि मन माहि बसतु है
तू करि किरपा प्रभ अपनी ॥२॥
बलि बलि जाउ सिआम सुंदर कउ अकथ कथा जा की बात सुनी ॥३॥
जन नानक दासनि दासु कहीअत है
मोहि करहु क्रिपा ठाकुर अपुनी ॥४॥ (पन्ना ८२७)

गुरमति विचारधारा में निर्गुण प्रभु के अलख और अगम्य रूप तथा व्यापक एवं भक्ति के आधार प्रेम स्वरूप का सुंदर समन्वय है। प्रभु शरीर रूपी नगर में है और उससे बाहर भी है। वह सर्वव्यापक है। प्रभु के गुणों का वर्णन मानव बुद्धि की सीमित परिधि से नहीं किया जा सकता। उसको मानव दृष्टि से विचार करने पर विरोधी गुण हैं। वह राजा तथा प्रजा स्वयं है। कहीं वह स्वामी है कहीं दास। उससे कुछ छिपा नहीं, उसे छला नहीं जा सकता, जहां कहीं देखते हैं वह निकट दिखाई देता है। निर्मल संतों के रूप में हमारी भेट साक्षात प्रभु से होती है। जीव का कोई अलग अस्तित्व नहीं है। जीव को सागर में मिली बूंद के समान एक रूप मानना चाहिए। क्या बूंद की अस्मिता सागर से अलग है?

मै नाही प्रभ सभु किछु तेरा ॥
ईघै निरगुन ऊघै सरगुन केल करत बिचि सुआमी मेरा ॥१॥रहाउ॥
नगर महि आपि बाहरि फुनि आपन प्रभ मेरे को सगल बसेरा ॥
आपे ही राजनु आपे ही राइआ कह कह ठाकुरु कह कह चेरा ॥१॥
का कउ दुराउ का सिउ बलबंचा जह जह पेखउ तह तह नेरा ॥

साध मूरति गुरु भेटिओ नानक मिलि सागर बूंद नही अन हेरा ॥२॥ (पन्ना ८२७)

राग बिलावल में श्री गुरु तेग बहादर जी के प्रथम दो शबदों में हरि-नाम-महिमा दुख-हर्ता के रूप में है। भक्ति के बिना हमारा प्रभु से अलग होने का संशय दूर नहीं होता। तीसरे शबद में भक्तिहीन प्राणी की तुलना पत्थर से की गई है जिसका जीवन-मुक्त होने के लिए मान-मोह को त्याग कर गोबिंद का गुण-गान करना चाहिए:

मान मोह दोनो कउ परहरि गोबिंद के गुन गावै ॥
कहु नानक इह बिधि को प्रानी जीवन मुकति कहावै ॥ (पन्ना ८३१)

बिलावल राग के शबदों के बाद अन्तरार्द्ध में अष्टपदी छंद श्री गुरु रामदास जी की वार तथा भक्त-बाणी मुख्य हैं। श्री गुरु अरजन देव जी द्वारा व्यक्त परमात्मा के स्वरूप का स्रोत श्री गुरु नानक देव जी की प्रथम अष्टपदी में है, किन्तु यह तथ्य गुरु के आदेशों पर चलने वाला कोई विरला जीव ही अनुभव करता है :

निकटि वसै देखै सभु सोई ॥
गुरमुखि विरला बूझै कोई ॥ (पन्ना ८३१)

अष्टपदियों में कुल ११ में से ६ अष्टपदियां श्री गुरु रामदास जी की हैं। तीसरी अष्टपदी में अगम अगोचर प्रभु तक पहुंचने के लिए सतिगुरु की टेक लेने का उपदेश है। सतिगुरु ही सत्य पुरख से मिलाने में समर्थ है। हम उस गुरु पर बलिहार जाते हैं :

गुरमुखि अगम अगोचरु धिआइआ हउ बलि बलि सतिगुर सति पुरखईआ ॥
राम नामु मेरै प्राणि वसाए सतिगुर परसि हरि नामि समईआ ॥ (पन्ना ८३४)

श्री गुरु रामदास जी की छः अष्टपदियां एक इकाई के रूप में हैं। तुकांत की लय एक होने से धारा-प्रवाह ध्यान की एकाग्रता में सहायक होता है।

अष्टपदियों के क्रम में ही श्री गुरु नानक देव जी की विशेष बाणी थिती दी गई है। इसमें चन्द्रमा के एक पक्ष की १५ संख्याओं के आधार पर आत्म-ज्ञान के विविध तथ्य दिये गए हैं। बाणी का आरंभ मूल-मंत्र की व्याख्या के रूप में है :

एकम एकंकारु निराला ॥
अमरु अजोनी जाति न जाला ॥
अगम अगोचरु रूपु न रेखिआ ॥
खोजत खोजत घटि घटि देखिआ ॥
जो देखि दिखावै तिस कउ बलि जाई ॥
गुर परसादि परम पदु पाई ॥ (पन्ना ८३८-३९)

समय पर आधारित श्री गुरु नानक देव जी की थिती (तिथि) बाणी के बाद श्री गुरु अमरदास जी की बाणी सप्ताह के सात दिन पर आधारित 'वार सत' है। श्री गुरु नानक देव जी की बाणी में एक इकाई में २० पद (चरण) हैं, किन्तु श्री गुरु अमरदास जी की बाणी दस-दस पदों (चरणों) के दो भागों में है। दोनों को विषय गुणों के भंडार (गुण तासा) प्रभु का जाप करना है। वह एक प्रभु कृपापूर्वक लिखे लेख के द्वारा ही मन में निवास करता है :

जा कै मसतकि लिखिआ लेखु ॥
ता कै मनि वसिआ प्रभु एकु ॥ (पन्ना ८४२)

बिलावलु राग में छंदों की कुल संख्या ९ है। श्री गुरु नानक देव जी प्रथम छंद के आरंभ में इस संसार में जीवन अवधि को लोक-जीवन के प्रतीकों से व्यक्त करते हैं। आत्मा रूपी नव वधू (मुग्धा नायिका) का रूप है और यह संसार एक अस्थाई घास की चरागाह (गोइल) है, जहां वर्षा-काल का समय बिताना होता है। विवेकशील आत्मा संसार के आकर्षण छोड़ देती है और हरि-नाम में लिव लगाती है। वह समरसता तथा सहज अवस्था को गुरु से प्राप्त करती है और वही उसका शृंगार है। वह

हाथ जोड़ कर गुरु से विनय करती है कि वह सच्चे प्रीतम प्रभु से मिले। प्रियतम वधू की प्रेम-भक्ति देखकर उसके विकारों को दूर करते हैं। प्रियतम के आकर्षण से सुहागिन होने का सम्मान मिलता है :

मुंध नवेलड़ीआ गोइलि आई राम ॥
मटुकी डारि धरी हरि लिव लाई राम ॥
लिव लाइ हरि सिउ रही गोइलि सहजि सबदि सीगारीआ ॥
कर जोड़ि गुर पहि करि बिनंती मिलहु साचि पिआरीआ ॥
धन भाइ भगती देखि प्रीतम काम क्रोधु निवारिआ ॥
नानक मुंध नवेल सुंदरि देखि पिरु साधारिआ ॥
(पन्ना ८४३)

श्री गुरु अरजन देव जी के ५ छंदों में द्वितीय छंद के अंतिम चरण में जीव के प्रभु से अभेद होने का वर्णन है। हरि-रस का आनंद वही जान सकता है जिसने उसका पान किया हो। जिस प्रकार जल का एक अंश वृहद सागर में मिलता है अथवा सूरज से उसकी किरण मिलती है तथा सम्पूर्णता को प्राप्त करती है, ऐसी ही स्थिति जीव और प्रभु-मिलन की है। एक से अनेक के विस्तार को वह एक ही जानता है। प्रभु स्वयं सृष्टि की रचना करने वाला है और स्वयं ही भोगा जाने वाला है। सृष्टि का कारण भी वही है :

सूरज किरणि मिले जल का जलु हूआ राम ॥
जोती जोति रली संपूरनु थीआ राम ॥
ब्रहमु दीसै ब्रहमु सुणीऐ एकु एकु वखाणीऐ ॥
आतम पसारा करणहारा प्रभ बिना नही जाणीऐ ॥
आपि करता आपि भुगता आपि कारणु कीआ ॥
बिनवंति नानक सेई जाणहि जिन्ही हरि रसु पीआ ॥ (पन्ना ८४६)

बिलावल राग की वार श्री गुरु ग्रंथ साहिब में संकलित अन्य वारों से संक्षिप्त है। वार में १३ पउड़ियां श्री गुरु रामदास जी द्वारा रचित हैं। पउड़ी ११ के साथ संकलित दो संक्षिप्त श्लोक श्री गुरु नानक देव जी के द्वारा रचित हैं। अन्य पउड़ियों में श्लोक श्री गुरु अमरदास जी द्वारा रचित हैं। पउड़ी १० के साथ संलग्न श्लोक भाव-रमणीयता के कारण हृदयग्राही हैं। हे प्रभु! पूरा संसार हिंसा और विषमता की त्रासदी से जल रहा है। अपनी कृपा के शीतल जल से इसे बचा लो। जो भी उद्धार का मार्ग हो उसी मार्ग पर चलने की सुमति देकर पथ-प्रदर्शन करो ताकि हम इस त्रासदी से पार पा सकें :

जगतु जलंदा रखि लै आपणी किरपा धारि ॥
जितु दुआरै उबरै तितै लैहु उबारि ॥ (पन्ना ८५३)

राग बिलावल में भक्त कबीर जी, भक्त रविदास जी, भक्त नामदेव जी तथा भक्त सधना जी की बाणी है। भक्त नामदेव जी की भांति भक्त कबीर जी भी अपने आराध्य विट्ठल भाव प्रभु की शरण ग्रहण करते हैं तथा विकारों से पूर्ण अपने मंदमति मन को भव-सागर पार कर मुक्ति की कामना करते हैं। राग बिलावल के अंत में भक्त सधना जी का उपलब्ध एक मात्र शबद है। भक्त सधना जी की आराधना पहचान कर प्रभु ने उनकी लज्जा बचाई।

प्राय: रागों की वारों से सम्बन्धित राग की प्रकृति के सम्बन्ध में श्लोकों में सुंदर सन्दर्भ मिलते हैं। बिलावल राग की वार में द्वितीय पउड़ी के साथ संकलित श्री गुरु अमरदास जी के दो श्लोक मननीय हैं। हे प्रिय सज्जनो! एक प्रभु के ध्यान में लीन होकर राग बिलावल का गायन करो। द्वैत भाव में बिलावल राग की उत्पत्ति नहीं होती। अगर हम सतिगुरु के उपदेश के अनुसार आचरण करते हैं तो आत्मिक आनंद प्राप्त होगा :

सदा बिलावलु अनंदु है जे चलहि सतिगुर भाइ ॥ (पन्ना ८४९)

गुरबाणी चिंतनधारा-२७

जापु साहिब की विचार व्याख्या

*-डॉ. मनजीत कौर**

निरुकत सरूप हैं ॥ त्रिमुकति बिभूत हैं ॥
प्रभुगति प्रभा हैं ॥ सुजुगति सुधा हैं ॥१२५॥

हे परवरदिगार! तेरा स्वरूप अवर्णनीय है। तेरा प्रताप माया के प्रभाव से परे है। संसार के समस्त जीव तेरे प्रभुत्व को स्वीकार करते हैं। तू महान रस है जो समस्त जीवों में एकरस समाया हुआ है।

उपरोक्त बंद में गुरदेव उस परमेश्वर को माया के त्रिगुणी प्रभाव से मुक्त मानते हुए स्पष्ट करते हैं कि दुनिया में समस्त जीव त्रिगुणी (सतो-रजो-तमो) रूप में उलझे हुए हैं। केवल एक ईश्वर जिसके अधीन यह माया है, इसके प्रभाव से मुक्त है। वही जीव माया के प्रभाव से मुक्त हो सकते हैं जिनका चित्त हरि-चरणों से जुड़ा है। पावन गुरबाणी का प्रमाण है :

—त्रिसना बुझै हरि कै नामि ॥
महा संतोखु होवै गुर बचनी ॥
प्रभु सिउ लागै पूरन धिआनु ॥ (पन्ना ६८२)

—सदैवं सरूप हैं ॥ अभेदी अनूप हैं ॥
समसतो पराज हैं ॥ सदा सरब साज हैं ॥१२६॥

हे वाहिगुरु! तेरा स्वरूप सदा कायम रहने वाला है। तेरे समान कोई और हस्ती नहीं। तू सबको पराजित करने वाला तथा सदा संसार का निर्माण करने वाला है। अत: उस परमेश्वर का वजूद सदा स्थिर रहने वाला है। उसका कोई शरीक नहीं, क्योंकि उस जैसा कोई भी नहीं । वह सब पर विजय हासिल करने वाला है। वह सदैव सारे जीवों का सृजनकर्त्ता है।

समसतुल सलाम हैं ॥ सदैवल अकाम हैं ॥
त्रिबाध सरूप हैं ॥ अगाध हैं अनूप हैं ॥१२७॥

हे वाहिगुरु! तू समस्त जीवों को सलामत रखता है अर्थात् तू ही सब जीवों को दुखों-क्लेशों-संतापों से मुक्त कर सही-सलामत रखता है। तू सदैव कामना से रहित है। तुझे कोई भी किसी तरह की इच्छा नहीं है। तेरी सत्ता विघ्न से रहित है, अत: तेरी राह में कोई बाधा पैदा नहीं कर सकता। तू सर्वव्यापी है। तेरे जैसा और कोई भी तो नहीं।

गुरदेव के पावन शब्दों में वह परमेश्वर सबकी सलामती का मूल है। गुरु जी कथन करते हैं कि हे प्रभु! तेरी हस्ती मुकम्मल है, तेरा मार्ग निर्विघ्न है।

ओअं आदि रूपे ॥ अनादि सरूपै ॥
अनंगी अनामे ॥ त्रिभंगी त्रिकामे ॥१२८॥

हे वाहिगुरु! तू सम्पूर्ण विश्व की आत्मा है। तेरी हस्ती सबसे पहले की है। तेरा स्वरूप अनादि है। तू अंगरहित, नामरहित है। तू तीनों लोकों का नाश करने वाला है तथा तू तीनों लोकों के जीवों की कामना पूर्ण करने वाला है।

इस बंद में 'त्रिभंगी' शब्द का अर्थ प्रो. साहिब सिंघ जी के चिन्तनानुसार 'तीन लोक' है। परन्तु स. जोगिंदर सिंघ जी तलवाड़ा ने 'त्रिभंगी' शब्द का आशय तीनों तापों (आधि, बियाधि तथा उपाधि) के अर्थ से किया है। उनके चिन्तनानुसार वह परमेश्वर तीनों तापों को नाश करने वाला है तथा तीनों भवनों (आकाश, पाताल एवं मातृलोक) के जीवों की

**२/१०४, जवाहर नगर, जयपुर (राजस्थान)-३०२००४ मो: ०१४१-२६५०३७०*

मनोकामनाएं पूरी करने में सक्षम है।

त्रिबरगं त्रिबाधे ॥ अगंजे अगाधे ॥
सुभं सरब भागे ॥ सुसरबा अनुरागे ॥१२९॥

हे वाहिगुरु! संसार के तीनों ही तत्व धर्म, अर्थ, काम तेरे अंदर ही समाहित हैं। तीनों लोकों के जीवों पर तेरा ही स्वामित्व है। तुझसे कोई जीत नहीं सकता। तू अथाह है। तेरे समस्त अंग सुंदर हैं। तू सब जीवों को प्यार करता है। अत: वह ईश्वर प्रेम का अथाह सागर है। वह प्रभु-प्रेम का ही प्रतीक है। वह सबसे प्यार करता है और सब जीव उस प्यारे प्रियतम से प्यार करते हैं।

त्रिभुगत सरूप हैं ॥ अछिज्ज हैं अछूत हैं ॥
कि नरकं प्रणास हैं ॥ प्रिथीउल प्रवास हैं ॥१३०॥

हे वाहिगुरु! तेरा स्वरूप ऐसा है जिससे तीनों लोकों के जीव आनन्दित हो रहे हैं। तू कभी क्षीण नहीं होता और न ही कभी पुराना होता है। तुझे कोई छू नहीं सकता। तू नर्कों को नाश करने वाला है। धरती पर मुसाफिरों की तरह रह रहे जीवों में तू ही समाया है।

प्रस्तुत बंद में गुरु कलगीधर पातशाह इस दुनिया को मुसाफिरखाना मानते हुए इस मुसाफिरखाने में आने वाले प्रत्येक राहगीर में उसी का निवास मानते हैं। अत: परमेश्वर नरक जैसे जीवन को भी आनंदमयी बनाने की क्षमता वाला है। वह ब्रह्मांड में हर रूप में समाया हुआ है अर्थात् वह ईश्वर कण-कण में रचा-बसा हुआ है।

निरुकति प्रभा हैं ॥ सदैवं सदा हैं ॥
बिभुगति सरूप हैं ॥ प्रजुगति अनूप हैं ॥१३१॥

हे वाहिगुरु! तेरा प्रताप अवर्णनीय है। तू सदा ही कायम है। तेरी हस्ती सबके लिए सुख प्रदान करने वाली है, आनंददायिनी है। तू सब जीवों में रचा-बसा है। तेरे जैसा तू ही है अर्थात् तेरा स्वरूप विलक्षण है।

निरुकति सदा हैं ॥ बिभुगति प्रभा हैं ॥
अनउकति सरूप हैं ॥ प्रजुगति अनूप हैं ॥१३२॥

हे मालिक! तेरा स्वरूप अकथनीय है। समस्त जीव तेरे प्रकाश का सुख भोग रहे हैं। तेरा स्वरूप पूर्णतया बयान नहीं हो सकता। तू सब जीवों में बसा हुआ है, पर फिर भी तेरे जैसा कोई नहीं। अत: तू उपमा-रहित है। तेरी किसी से तुलना नहीं की जा सकती। तू बेमिसाल है।

चाचरी छंद ॥

अभंग हैं ॥ अनंग हैं ॥
अभेख हैं ॥ अलेख हैं ॥१३३॥

हे वाहिगुरु! तू नाशरहित है। तू अंगरहित है अर्थात् देहधारी स्वरूप वाला नहीं है अर्थात् तत्वों से निर्मित तेरी रचना नहीं, इसलिए तू पांच तत्वों में विलीन नहीं हो सकता, इसलिए तू नाशरहित है। तेरा कोई विशेष वेश नहीं है, इसलिए तेरी कोई तस्वीर नहीं बन सकती। 'अलेख' अर्थात् तेरे बारे में कुछ लिखा भी नहीं जा सकता। अत: गुरदेव उस परमेश्वर को हर रूप से अकथनीय, अतुलनीय मानते हैं।

अभरम हैं ॥ अकरम हैं ॥
अनादि हैं ॥ जुगादि हैं ॥१३४॥

कलगीधर पातशाह कथन करते हैं कि हे अकाल पुरख! तू भ्रमरहित है। तू कर्मकाण्डों अर्थात् रिवाजों-रस्मों में नहीं उलझता। तेरा मूल्य नहीं जाना जा सकता। तू युगों के प्रारंभ से है।

वह परमात्मा भ्रमों-भुलेखों से मुक्त है। धार्मिक रीति-रिवाजों की उसे कोई आवश्यकता ही महसूस नहीं होती। यह बात जानी नहीं जा सकती कि तेरी उपस्थिति कब से है, वस्तुत: समय के बंधन से तू स्वतंत्र है। प्रत्येक जीव समय की सीमा में है, केवल वह ईश्वर ही इन समस्त बंधनों से मुक्त है।

गुरु-गाथा-६

प्रथम परीक्षा

*-डॉ. अमृत कौर**

एक नन्हा सा बालक, नाम था जेठा, आयु होगी यही छः-सात वर्ष, मुख पर अनोखा तेज और शान्ति लिए, घुंघनियां (उबले चने) बेच रहा था। मसाला और नींबू डाल कर, "स्वादिष्ट मसालेदार चने ले लो, स्वादिष्ट मसालेदार चने ले लो" की आवाज दे रहा था। शाम का समय था। श्री गुरु अमरदास जी महाराज उधर से गुजरे। मधुर कंठ से निकली भावभीनी आवाज उनके कानों में पड़ी, "रसभरी, स्वादिष्ट मासलेदार घुंघनियां ले लो।" एक सुंदर सलोने छोटे से बालक को घुंघनियां बेचते देखकर उनके कदम वहां रुक गए और पूछा, "क्या बात है अभी से चने बेचने का काम कर रहे हो?" "गुरु जी! जीविका अर्जित करना तो मुख्य आवश्यकता है। गुरमति भी यही कहती है।" "शाबाश! परन्तु तुम्हारी आयु तो शिक्षा ग्रहण करने की है न कि रोजी-रोटी कमाने की।" "गुरु जी वस्तुतः मेरे माता-पिता जी नहीं हैं। परिवार के भरण-पोषण का उत्तरदायित्व मेरे कंधों पर है। मेरी मां ये घुंघनियां बना देती है। शाम को जो बचत होती है उससे हमारे परिवार की गुजर-बसर हो जाती है।" "आज कितना कमाया है?" "अभी बताता हूं।" बालक ने गिने बारह आने। "ये पैसे मुझे चाहिए, गुरु-घर में चढ़ाने के लिए।" "धन्य भाग्य मेरे, जो मेरी तुच्छ सेवा गुरु-घर के काम आए।" और बालक ने सारी कमाई गुरु जी को सहर्ष अर्पित कर दी। घर जाकर नानी मां को आज की सारी घटना सुनाई। नानी मां प्रसन्न हुई। खुशी से आंखों में आंसू आ गए, "गुरु-घर में चढ़ावे की कोई कमी थोड़े ही है? पर आज गुरु महाराज स्वयं चल कर तुम्हारे पास आए थे चढ़ावा मांगने के लिए। धन्य भाग्य हमारे!" उनके मुंह से निकला।

दूसरे दिन बालक की उत्सुक आंखें गुरु जी को खोज रही थीं। गुरु जी आये, मधुर मुस्कान बिखेरते हुए और उस दिन की कमाई आठ आने भी ले गए। नानी मां कल की तरह आज भी प्रसन्न हुई। जो थोड़ा सा रूखा-सूखा अन्न घर में बचा था खाकर ऊपर से काफी पानी पी लिया। नानी मां कहने लगीं, "बेटा जब खाने को कम हो और काफी पानी पी लो तो भूख मिट जाती है।" तीसरे दिन गुरु जी फिर पहुंचे। "कितनी कमाई हुई है बेटे?" "केवल चार आने।" "क्या बात है तुम्हारी कमाई कम होती जाती है?" "गुरु जी दिन में जो कमाई होती है उसी से सामान खरीदा जाता है और घर का गुजारा चलता है। घर में सामान कम था, सो कम कमाई हुई।" गुरु जी की बालक पर कृपा, वर्षा की भांति बरसने लगी। बालक को गले से लगा लिया। यह तो एक परीक्षा थी भावी गुरु की जिस पर बालक खरा उतरा था। यह उसके जीवन का प्रथम पाठ था सब कुछ गुरु-घर के चरणों में अर्पित कर देना। गुरु जी गुनगुना दिए:

जउ तउ प्रेम खेलण का चाउ ॥
सिरु धरि तली गली मेरी आउ ॥
इतु मारगि पैरु धरीजै ॥
सिरु दीजै काणि न कीजै ॥ (पन्ना १४१२)

अभी तो उसे सेवा की कर्मठता की अनेक परीक्षाओं में से गुजरना था। अभी तो उसकी यह प्रथम परीक्षा थी और इस प्रथम परीक्षा में वह खरा उतरा था।

*१५४, ट्रिब्यून कालोनी, बलटाना जीरकपुर-१४०६०३

दशमेश पिता के ५२ दरबारी कवि-१६

दशमेश-दरबार के संस्कृत-विद्वान : कवि सैणा सिंघ

*-डॉ. राजेंद्र सिंघ**

दशमेश पिता साहिब श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी का पाऊंटा साहिब एवं अनंदपुर साहिब स्थित दरबार विद्वानों, मनीषियों एवं कवि-कोविदों का आश्रय-स्थल था। दशमेश पिता की यह हार्दिक इच्छा थी कि दरबार के विद्वान संस्कृत भाषा का अध्ययन करें ताकि संस्कृत में रचे वेद-उपनिषद आदि ग्रंथों का पठन-पाठन करके आम जनता को उनके सार-तत्व से अवगत कराया जा सके। लोगों के लिए यह कार्य किया जाना अति आवश्यक था, क्योंकि अनेक सदियों से ब्राह्मणों ने आम आदमी के संस्कृत पढ़ने पर रोक लगा रखी थी। जनता को संस्कृत आती नहीं थी और ब्राह्मण-श्रेणी संस्कृत में लिखे ग्रंथों की मनमर्जी की व्याख्या करके लोगों में भ्रम-भ्रांतियों का संचार करती थी। दशमेश पिता चाहते थे कि सिख संस्कृत सीखें और संस्कृत-ग्रंथों को स्वयं पढ़ कर उनकी वास्तविकता का पता लगायें और जनसाधारण तक सच्चाई पहुंचायें।

इस उद्‌देश्य की प्राप्ति के लिए दशमेश पिता ने एक ब्राह्मण को नियुक्त किया कि वह आकर दरबारी विद्वान सिखों को संस्कृत पढ़ाये। ब्राह्मण पहले दिन आया और आते ही अध्ययन शुरू करने से पहले उसने शिक्षार्थियों की जाति पूछी। जब ब्राह्मण को पता लगा कि सभी संस्कृत पढ़ने के चाहवान तथाकथित निम्न समझी जाने वाली जातियों से संबंधित हैं तो उसने पढ़ाने से इंकार कर दिया और कहा कि ब्राह्मणों के सिवा और किसी को संस्कृत या वेद-विद्या पढ़ने का अधिकार नहीं है। दशमेश पिता ने ब्राह्मण को बहुत समझाया परंतु ब्राह्मण अपनी जिद पर अड़ा रहा और सिखों को पढ़ाने से इंकार कर गया।

इस पर दशमेश पिता साहिब श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने पांच निकटवर्ती सिखों को काशी (बनारस) जाकर संस्कृत का अध्ययन करने के लिए कहा। काशी जाने वाले पांच सिखों में से एक थे—कवि सैणा जी।

कवि सैणा जी दशमेश पिता के दरबार में 'लिखारी' का कार्य करते थे। कहते हैं इनकी लिखाई बहुत ही सुंदर थी। गुरु जी इनसे बहुत स्नेह भी करते थे।

कवि सैणा जी और उनके चार साथी सिख संवत् १७४२ विक्रमी यानी सन् १६८५ ई में काशी गये और बहुत ही कम समय में संस्कृत और वेद-विद्या के उच्च कोटि के विद्वान बन कर वापिस आये।

कवि सैणा जी ने बाद में 'अमृत-पान' किया और 'कवि सैणा सिंघ' के रूप में 'सिंघ' सज गये। कवि सैणा सिंघ के रचे कुछ-एक छंद भी आज प्राप्त होते हैं। ये छंद 'बंसावली नामा केसर सिंघ', 'गुरु-पद प्रेम प्रकाश' और 'गुर प्रताप सूरज ग्रंथ' आदि ग्रंथों में संकलित हैं। यही नहीं, इस विद्वान कवि ने कई संस्कृत-ग्रंथों का पंजाबी-ब्रज में अनुवाद भी किया।

एक बार एक बड़ी रोचक घटना घटी। कवि सैणा सिंघ से कोई गलती हो गई। गुरु साहिब से भयभीत होकर ये अपने घर भाग आये। कुछ दिनों बाद जब डर कुछ कम हुआ तो साहस करके इन्होंने गुरु जी को एक दोहा लिख कर क्षमा मांगी :

जब ते प्रभु ते बीछुरे, करयो क्रिखी को ठाट।
ब्रिखभन संगति हम करी, भए जाट के जाट।

दशमेश पिता ने कवि सैणा सिंघ को क्षमा करके बुला लिया और फिर सेवा सौंप दी।

**१/३३८ 'स्वप्नलोक', दशमेश नगर, मंडी मुल्लांपुर दाखा (लुधियाना)।*

खबरनामा

श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के ३०० वर्षीय गुरगद्दी समारोह पर समूह मानवता को श्री गुरु ग्रंथ साहिब का दामन थामने का दिया गया संदेश

तलवंडी साबो : २० अक्तूबर। साहिब श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी ऐसे सर्वसांझे गुरु हैं जो कि मजहबों, रंगो, नस्लों, जातियों, क्षेत्रों, उपक्षेत्रों और भाषाओं के सभी भेदभाव मिटाकर सांझीवालता के निर्मल बंधनों में बांधते हैं, कुल लोकाई की सभी समस्याओं का समाधान बख्शते हैं तथा सच्चे प्रभु-नाम की औषधि के साथ मनुष्यता के सभी रोगों को दूर करते हुए सदीवी खुशियां बख्शिश करते हैं। श्री गुरु ग्रंथ साहिब हमको लोक-परलोक का हर सुख, हर खुशी प्रदान करने के सक्षम हैं। परंतु यह सब हमको मिल तभी सकता है यदि हम इस सक्षम गुरु की शरण में आएंगे। इन विचारों की अभिव्यक्ति श्री अकाल तख्त साहिब के जत्थेदार सिंघ साहिब ज्ञानी गुरबचन सिंघ ने श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के ३०० वर्षीय गुरगद्दी दिवस को समर्पित स्थानीय दीवान हाल भाई डल्ल सिंघ में विराजमान संगत को संबोधित करते हुए की। उन्होंने कहा कि दशमेश पिता श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के देश, कौम के सिर पर बेअंत उपकार हैं, जिनमें एक उपकार तख्त श्री दमदमा साहिब की भाग्यशाली धरती पर आकर जंगी कमरकस्सा खोल, अपने सिखों को साहित्य-अध्ययन और साहित्य रचना की दिशा में महान बख्शिशें प्रदान करना है। इस पावन स्थान पर वचन किये कि हम जिस स्थान से कलमें बनाकर फेंक रहे हैं, यह विद्या का स्थान होगा। उन्होंने इस स्थान को 'गुरु कांशी' का दर्जा देते हुए फरमान किया कि यहां अल्प बुद्धि वाले भी बुद्धि-प्रकाश प्राप्त करेंगे।

ज्ञानी गुरबचन सिंघ ने कहा कि श्री गुरु ग्रंथ साहिब के पावन निर्मल उपदेश को पढ़ना, सुनना तथा कमाना ही आज के समूह सिख पंथ का सुकर्म है; विश्वास एवं परिपक्व इरादे वाले सिख श्री गुरु ग्रंथ साहिब का दामन पकड़ कर लोक-परलोक के सभी सुख, चाव, खुशियां, आनंद प्राप्त करेंगे। उन्होंने कहा कि आओ! इस ऐतिहासिक अवसर पर गुरु साहिब के उपदेश को अपने जीवन में अपनाते हुए खंडे-बाटे की पाहुल छक कर गुरु-परिवार वाले बनें।

इस अवसर पर पंजाब के मुख्यमंत्री स. प्रकाश सिंघ बादल ने संगत को बधाई देते हुए कहा कि राजनीतिज्ञ और विज्ञानी जिस वायु और जल-प्रदूषण की आज बात कर रहे हैं, गुरु साहिब ने आज से कितना समय पूर्व धरती, जल और वायु को सम्माननीय दर्जा देते हुए इसको मानवी जीवन के लिए अति आवश्यक करार दिया है। उन्होंने कहा कि विज्ञानी आज कन्या-भ्रूण हत्या को रोकने की बात कर रहे हैं लेकिन गुरु साहिब ने तो स्त्री को सत्कार तथा समानता का दर्जा उस युग में दिया था जब स्त्री को घोर अपमानित किया जाता था।

शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के अध्यक्ष जत्थेदार अवतार सिंघ ने कहा कि हरेक धर्म के अपने-अपने धर्म-ग्रंथ हैं और हर धर्म का ग्रंथ मानवी जीवन को सही दिशा देता है, परंतु संसार के धर्म-ग्रंथों में से श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी को गुरु-पदवी का बुलंद रुतबा प्राप्त है। उन्होंने कहा श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी इसलिए विलक्षण हैं कि इनमें अंकित बाणीकारों का

जात-पात के विश्वासों और प्रांतों की परिधियों से ऊपर विशाल घेरा है। उन्होंने कहा कि शिरोमणि कमेटी ने विभिन्न शताब्दियां मनाकर गुरु साहिब के संदेश को विश्व भर में उजागर किया है और गर्वयोग्य बात यह है कि सिख धर्म ने संसार के धर्म-क्षेत्र के साथ जुड़े विद्वानों, धर्म-शास्त्रियों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया है। उन्होंने कहा कि नानकशाही कैलेंडर के अनुसार शिरोमणि कमेटी की ओर से गुरु नानक नाम-लेवा संगत के सहयोग के साथ यह पावन पर्व तख्त श्री दमदमा साहिब के ऐतिहासिक स्थान पर मनाया जा रहा है।

इस अवसर पर तख्त श्री केसगढ़ साहिब, आनंदपुर साहिब के जत्थेदार सिंघ साहिब ज्ञानी त्रिलोचन सिंघ तथा तख्त श्री दमदमा साहिब, तलवंडी साबो के जत्थेदार सिंघ साहिब ज्ञानी बलवंत सिंघ नंदगढ़ ने भी अपने-अपने बधाई संदेशों में संगत को गुरु के संग जुड़ने का आहवान किया।

पावन गुरधामों का अपमान करने वालों को सिख शूरवीरों ने सदैव सबक सिखाया : ज्ञानी धर्म सिंघ

अमृतसर : ३१ अक्तूबर। इतिहास साक्षी है कि समय-समय हाकिमों की तरफ से सिखी के स्रोत श्री हरिमंदर साहिब और श्री अकाल तख्त साहिब के सम्मान व मर्यादा को क्षति पहुंचाने का सिख कौम के बहादुर तथा शूरवीर योद्धाओं ने मुंह तोड़ जवाब दिया। ऐसे महान शूरवीरों में थे भाई बेअंत सिंघ शहीद, जिन्होंने पंथ-दोखियों से अपने पावन गुरधामों के अपमान का बदला लिया। इन विचारों का प्रकटावा श्री हरिमंदर साहिब के अरदासिये सिंघ ज्ञानी धर्म सिंघ ने महान शहीद भाई बेअंत सिंघ की वार्षिक स्मृति में अखंड पाठ के भोग उपरांत श्री हरिमंदर साहिब परिसर में सुशोभित गुरुद्वारा झंडा बुंगा में एकत्रित संगत को संबोधित करते हुए किया। उन्होंने कहा कि सिख अपने गुरु और पावन गुरधामों का अपमान किसी भी कीमत पर सहन् नहीं कर सकता। सिंघ शूरवीरों को आत्म-सम्मान तथा स्वाभिमान के लिए मर-मिटने और कौम के लिए स्वयं को कुर्बान करते रहने की प्रेरणा शानदार खालसाई विरासत से मिली है। उन्होंने कहा कि महान शहीद भाई बेअंत सिंघ ने गुरधामों के अपमान का बदला चुकाकर सिख कौम का सर ऊंचा किया है। ऐसे शहीद कौम की धरोहर होते हैं। उन्होंने कहा कि स्वयं को कुर्बान करने वाले सिंघ शूरवीर पैदा होते रहेंगे और जानबूझ कर भूलें करने वाले दुष्टों को सबक सिखाते रहेंगे। उन्होंने कहा कि शिरोमणि कमेटी ने इस महान शहीद के प्रति अपनी भावनाएं प्रकट करते हुए जो समागम आयोजित किया है, महान शूरवीरों को श्रद्धा-सुमन भेंट करने के लिए ऐसे समागम समय-समय होते रहने चाहिए और यह हमारा कर्त्तव्य भी है। इस श्रद्धांजलि अवसर पर शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के अधिकारियों के अतिरिक्त सिंघ साहिबान और समूह स्टाफ उपस्थित था।

प्रिंटर व पब्लिशर स. दलमेघ सिंघ ने गोल्डन आफसेट प्रेस, गुरुद्वारा रामसर साहिब, अमृतसर से छपवा कर मालिक शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के लिए कार्यालय, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, अमृतसर से प्रकाशित किया।संपादक स. सिमरजीत सिंघ। प्रकाशित करने की तिथि : ०१-१२-२००८